सुसंस्कार
वाटिका

सुसंस्कार वाटिका

लेखक

अभीक्षण ज्ञानोपयोगी

आचार्य श्री १०८ वसुनंदी जी मुनिराज

प्रकाशक

निर्ग्रन्थ ग्रंथमाला

कृति - **सुसंस्कार वाटिका**

मंगलाशीष - परम पूज्य सिद्धांत चक्रवर्ती आचार्य
श्री १०८ विद्यानंद जी मुनिराज

कृतिकार - परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य
श्री १०८ वसुनंदी जी मुनिराज

संपादक - मुनि प्रज्ञानंद

संस्करण - प्रथम (सन् 2022)

प्रतियाँ - 1000

ISBN - 978-93-94199-28-6

मूल्य - सदुपयोग

प्राप्ति स्थान - इ-16, सै. 51, नौएडा (गौतमबुद्ध नगर) - 201301
99715 48899, 98675 57666

प्रकाशक - निर्ग्रन्थ ग्रंथमाला समिति (सर्वाधिकार सुरक्षित)

मुद्रक - सांई ग्राफिक्स, 603, नेमिनाथ अपार्टमेन्ट,
सुमुल डेरी रोड, सूरत

संपादकीय...

मनोरंजन बालकों की न केवल शारीरिक क्षमता का विकास करते हैं अपितु यदि वे प्रशस्त हैं तो बौद्धिक क्षमता का विकास भी करते हैं। कविता विकारों का निराकरण कर सुसंस्कारों को देने में समर्थ होती है। जब समुचित ताल, लय युक्त रागान्वित होकर काव्य पाठ व छंदों को गाया जाता है तो बच्चों का सुकोमल मनमयूर वैसे ही थिरकने लगता है जैसे सघन मेघ को देखकर पपीहे आनंदित होते हैं व पवन की मृदु थाप सहकर बादल उछलने लगते हैं। बालकों के लिए कविता पाठ करना इसीलिए आवश्यक है जिससे उनके मस्तिष्क के सुकोमल तन्तुओं पर सिद्धांत का भार दुखद प्रतीत न हो। आनंद व मस्ती में झूमने वाले बालक कविताओं के माध्यम से किसी भी विषय के दुरुह सिद्धांतों को भी कंठस्थ करने में समर्थ होते हैं। काव्य पाठ व कविता क़िसी भी दुरुह विद्या को हस्तगत करने का सरल सहज उपाय है। काव्य पाठ में नव रस उत्पन्न करने का सामर्थ्य है।

प्रस्तुत काव्य पुस्तक "सुसंस्कार वाटिका" परम पूज्य आचार्य गुरुवर श्री वसुनंदी जी मुनिराज द्वारा धर्म व देश के भविष्य बालकों के लिए लिखी गई कविताओं का संकलन है। आचार्य श्री की विशेषता है कि उन्होंने देश के व समाज के सभी पदासीन अधिकारियों, सामान्य वर्गों व नागरिकों के लिए अपनी लेखनी के माध्यम से शिक्षा प्रदान की। बालकों से लेकर वृद्धों तक जिन्हें सब अपने अनुसार समझ सकें ऐसे बहुत साहित्य की रचना की। प्राकृत साहित्य के रचनाकार हिन्दी कवितायें लिख रहे हैं बस इसी से उनकी सरलता, सहजता व बच्चों में संस्कार होने की तीव्र भावना प्रदर्शित होती है।

इसमें कुछ कवितायें सदाचार, रात्रिभोजन त्याग, अभिवादन, कर्त्तव्यपालन पर लिखित हैं। तो कहीं कुछ कवितायें प्रथमानुयोग जैसे - सुभग ग्वाला, राजा वसु, राजा मेघरथ, मृगसेन धीवर, अंजन चोर आदि पर आधारित हैं। प्रत्येक कविता अत्यंत रोचक व शिक्षाप्रद है।

प्रस्तुत कविता पुस्तक 'सुसंस्कार वाटिका' का संपादन आचार्य गुरुवर की कृपा से ही किया गया है। हमारे प्रमाद वश इस संपादन कार्य में यदि कोई त्रुटि रह गई हो तो सुधी जन संकेत कर संशोधित कर पढ़े। बच्चों की इस कविता की पुस्तक में चित्र बनाकर इसे और सुंदर व आकर्षक बनाने हेतु श्रीमान् अतुल कुमार जी अहमदाबाद की सुपुत्री आयुषी के लिए पूज्य गुरुदेव का शुभाशीष। व इस पुस्तक के मुद्रण व प्रकाशन में सहयोगी सभी श्रावकों को भी पूज्य गुरुदेव का मंगलमय आशीर्वाद। परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य गुरुवर श्री वसुनंदी जी मुनिराज के चरणों में सिद्ध-श्रुत-आचार्य भक्ति सहित कोटिशः

नमोस्तु... नमोस्तु... नमोस्तु... !

'जैनम् जयतु शासनम्'

गुरुचरण भ्रमर
मुनि प्रज्ञानंद

अनुक्रमणिका

क्रम.	विवरण	पृष्ठ नं.
१.	मेरी दिनचर्या	१
२.	अभिवादन	२
३.	२४ तीर्थंकर	४
४.	जिन गंधोदक महिमा	८
५.	जैन वर्णमाला	८
६.	मंदिर जाना है	९
७.	तीन रतन	१०
८.	सबसे अच्छा जैन धरम	११
९.	जैनों का मूल ध्वज	१२
१०.	इन्द्रिय ज्ञान	१३
११.	कषाय भाव को त्यागेंगे	१५
१२.	हमें पाप को तजना है	१६
१३.	हम भगवन् बन जायेंगे	१७
१४.	समवशरण में जाना है	१८
१५.	रात्रि भोजन पाप है	१९
१६.	शाकाहार	२०
१७.	इन सबको फिर तजना है	२१
१८.	माता-पिता की आज्ञा मानो	२२
१९.	सच्चा श्रावक कौन	२३
२०.	हम अच्छे इंसान बनेंगे	२५
२१.	रात्रि भोजन छोड़ दो	२६
२२.	पञ्च बालयति	२७
२३.	तभी सिद्ध बन पायेंगे	२८
२४.	मोक्षपुरी की रेल	३०
२५.	संसार दृश्य दर्पण	३१
२६.	गर हमको आगे ही बढ़ना है	३२
२७.	स्याद्वाद	३३
२८.	भगवान् महावीर के नाम	३५
२९.	धनदत्त	३८
३०.	सुभग ग्वाला	४१
३१.	राजावसु	४४
३२.	मेढ़क	४६
३३.	श्मश्रुनवनीत	४८
३४.	मृगसेन धीवर	५०
३५.	अंजनचोर	५१
३६.	धनंजय कवि	५२
३७.	राजा मेघरथ	५३
३८.	पद्मरुचि सेठ	५४

मेरी दिनचर्या

उठो सवेरे पहले नहाओ, तब पीछे तुम मंदिर जाओ ।
माता-पिता के छूओ पैर, कभी किसी से रखो ना बैर ॥
जय जिनेन्द्र सबसे बोलो, णमोकार मुँह से खोलो ।
गाली कभी न तुम देना, गुरु आशीष सदा लेना ॥
स्कूल समय पर जाना है, अच्छाई सीखकर आना है ।
गुरुजन की आज्ञा मानो, अच्छे बनने की ठानो ॥
गृहकार्य नित करना है, धर्म ही आखिर शरणा है ।
धर्म कभी नहीं छोड़ेंगे, धर्म से नाता जोड़ेंगे ॥

अभिवादन

अरिहंतों को नमोस्तु, श्री सिद्धों को नमोस्तु ।
आचार्यों को नमोस्तु, उपाध्यायों को नमोस्तु ॥
सब मुनियों को नमोस्तु, जिनवाणी को नमोस्तु ।
जैन धर्म को नमोस्तु, भगवंतों को नमोस्तु ॥

जिन बिम्बों को नमोस्तु, जिनमंदिर को नमोस्तु ।
आर्यिका जी को वंदामि, ऐलक जी को इच्छामि ॥
क्षुल्लक जी को इच्छामि, क्षुल्लिका जी को इच्छामि ।
वर्णी जी को इच्छाकार, पूज्यजनों को नमस्कार ॥
भईया जी को वंदना, दीदी जी को वंदना ।
साधर्मी को जय जिनेन्द्र, भाई बहिनों को जय जिनेन्द्र ॥
मित्रों से भी जय जिनेन्द्र, आपस में भी जय जिनेन्द्र ।
माता पिता के छूना पैर, रखो किसी से कभी न बैर ॥
हिलमिल कर अब रहना है, सच्ची बात ही कहना है ।
दया धर्म सिखलायेंगे, जैन धर्म अपनायेंगे ॥

24 तीर्थंकर

ऋषभनाथ का कहता बैल,
चालो मोक्षपुरी के गैल[1]॥

1

2

अजितनाथ का कहता हाथी,
जैन धर्म है सच्चा साथी ॥

संभवनाथ का बोले घोड़ा,
तुम भी धर्म करो कुछ थोड़ा ॥

3

4

अभिनंदन का आया बंदर,
चलो चलें सब मिलकर मंदिर ॥

सुमतिनाथ का चकवा भाई,
पर निंदा है भव दुःखदायी ॥

5

6

पद्मप्रभ का लाल कमल है,
सिद्धप्रभु ही नित्य अमल हैं ॥

1. रास्ता

सुपार्श्वनाथ का कहता स्वस्तिक,
बन जाओ तुम पूर्ण आस्तिक ॥

7

8

चन्द्रप्रभ का चंदा बोले,
भक्ति कर ले हौले-हौले ॥

पुष्पदन्त का मगर कहाया,
हमने जैन धर्म है पाया ॥

9

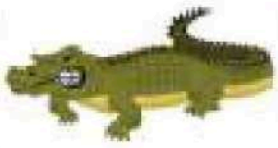

10

शीतलनाथ का है कल्पवृक्ष,
दया दान में बनेंगे दक्ष ॥

श्रेयांसनाथ का गेंडा बोला,
सबसे अच्छा मानव चोला ॥

11

12

वासुपूज्य का देखो भैंसा,
पूजन में संकोच है कैसा ॥

13 विमलनाथ का कहता सूअर,
धर्म बिना नर होता **Poor** ॥

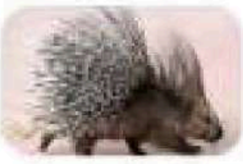

14 अनंतनाथ का सेही बोला,
तजो पाप का जल्दी चोला ॥

15 धर्मनाथ का वज्रदण्ड है,
मार्ग पतन का इक घमण्ड है ॥

16 शान्तिनाथ का शान्त हरिण है,
जैनधर्म ही तारण तरण है ॥

17 कुंथुनाथ का बकरा बोला,
धर्म बिना नर भव में डोला ॥

18 अरनाथ की मछली प्यारी,
जिनवाणी है मात हमारी ॥

मल्लिनाथ का कलश सुपावन, 19
सोलहकारण है मन भावन ॥

20 मुनिसुव्रत का कछुआ कहता,
अच्छे का फल अच्छा होता ॥

नमिप्रभु का नील कमल है, 21
जिन गंधोदक महा अमल है ॥

22 नेमिनाथ का शंख पुकारे,
आजा देव-शास्त्र-गुरु द्वारे ॥

पार्श्वनाथ का नाग बड़ा है, 23
भक्ति करने भक्त खड़ा है ॥

24 महावीर का सिंह दहाड़े,
पुण्य आता दुःख में आड़े ॥

चिह्न सहित चौबीस भगवान्,
नित्य जपें हम इनके नाम ॥

हम भी ये सब याद करेंगे,
भव सागर से शीघ्र तरेंगे ॥

जिन गंधोदक महिमा

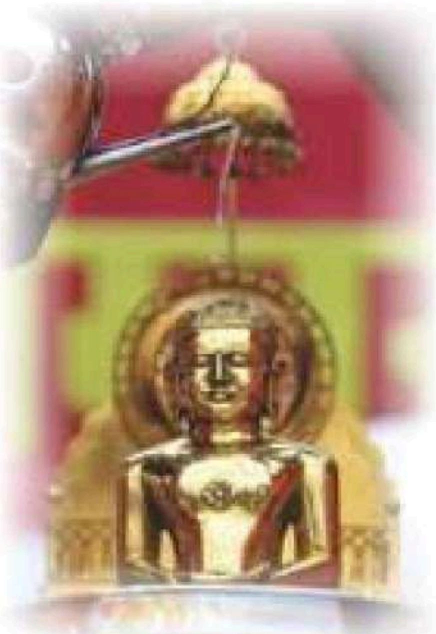

"गंधोदक जिनराज का, गुण से भरा अनेक ।
जो इसका सेवन करे, दुःख रहे न एक ॥
दुःख रहे न एक, जो प्रतिदिन इसे लगावे ।
इसे लगाने वालों का तन, मन निर्मल हो जावे ॥
गंधोदक जिनदेव का, देता पुण्य महान ।
पापों की हानि करे, निश्चित मुक्ति जान ॥"

जैन वर्णमाला

छोटा 'अ' अरिहंत का,
'आ' आचार्य भगवंत का,
छोटी 'इ' इम्तिहान की,
बड़ी 'ई' ईमान की,
छोटा 'उ' उपाध्याय का,
बड़ा 'ऊ' ओंकार का,
'ऋ' है शुभ ऋषिराज का ।
'ए' एकता साम्राज्य का ।
'ऐ' ऐतिहासिक बनायेगा ।
'ओ' ओम बन जायेगा ।
'औ' औषधि का दान करो ।
अं अः कहे गुणगान करो ॥

मंदिर जाना है

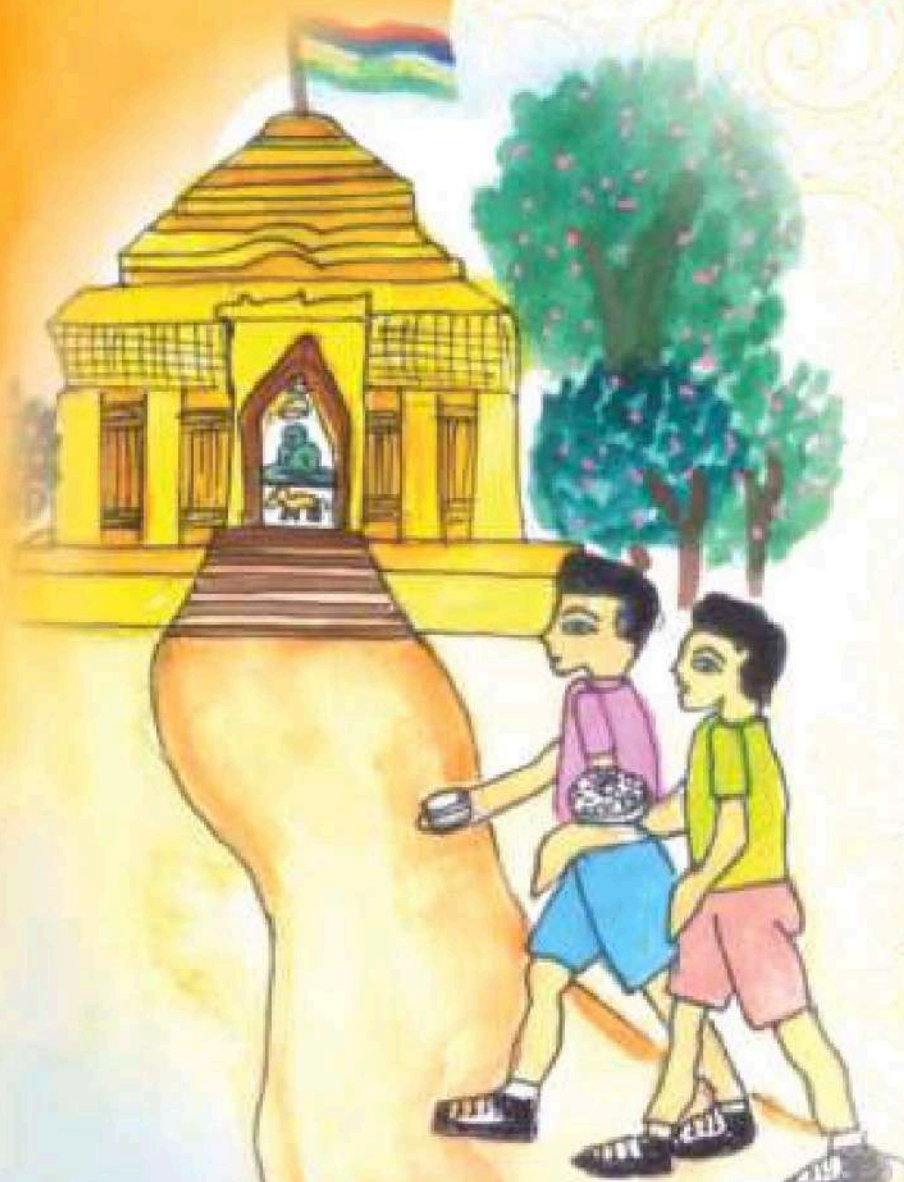

"हमको मंदिर जाना है,
प्रभु को शीश झुकाना है ।

आठों द्रव्य चढ़ाना है,
परिक्रमा तीन लगाना है ।

सारे पाप मिटाता जो,
महामंत्र कहलाता वो ।

जो भी जाप लगाता है,
अतिशय पुण्य कमाता है ।

हमको जाप लगाना है,
सारे दु:ख नशाना है ।

जीवन सफल बनाना है,
मंदिर जी में जाना है ।"

तीन रतन

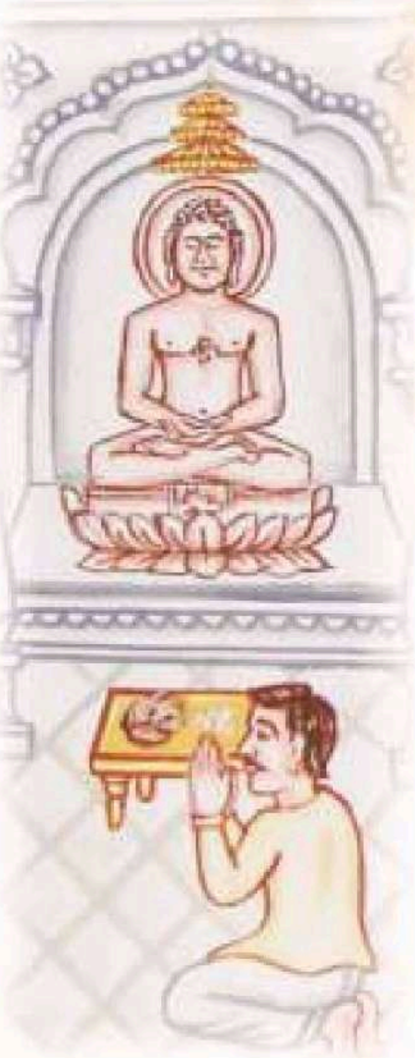

देव हमारे श्री अरिहंत,
गुरु हमारे हैं निर्ग्रंथ ।
जिनवाणी है देव वचन,
जैन धर्म है मोक्ष जतन ।।

देव हमारे गतरागी,
गुरु हमारे हैं त्यागी ।
दया सिखाती जिनवाणी,
जिसको चाहता हर प्राणी ।।

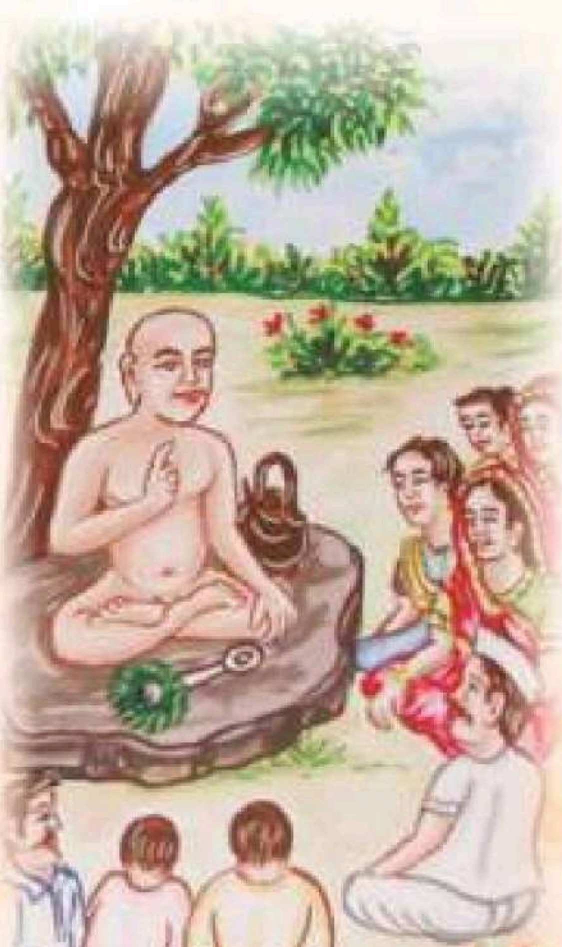

देव कर्म से हीन हैं,
गुरु आतम में लीन हैं ।
आगम प्रभुवर की वाणी,
पढ़कर सुख पाता प्राणी ।

इन पर श्रद्धा करते हैं,
अपने सब दुःख हरते हैं ।
तीन रतन को ध्यायेंगे,
सच्चे सुख को पायेंगे ।।

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

सबसे अच्छा जैन धरम

सबसे अच्छा जैन धरम,
इसमें होते श्रेष्ठ करम ।
जिसका होता चित्त नरम,
वो पाता है मोक्ष 'शरम' ॥
जैनी वो कहलाता है,
जो जिनमंदिर जाता है ।
छान के पानी पीता है,
दिन में खाकर जीता है ।
दया सभी पर करता है,
प्राण घात नहीं करता है ।
जीओ और जीने दो भाई,
सीख वीर ने सिखलाई ।
जैन धर्म हम पालेंगे,
निज कर्तव्य संभालेंगे ।
जग में शांति करना है,
जैन धर्म चित्त धरना है ॥

1. सुख

जैनों का मूल ध्वज

पचरंगा ये ध्वजा हमारा,
हमको प्राणों से भी प्यारा।
लाल वर्ण श्री अरिहंतों का,
श्वेत वर्ण है श्री सिद्धों का।
आचार्यों का वर्ण है पीला,
उपाध्यायों का वर्ण है नीला।
श्याम वर्ण साधु का मानो,
करता हानि पाप की जानो।
पंचवर्ण का ध्वज ये प्यारा,
इसकी रक्षा फर्ज हमारा।
इस पीछे जिन शासन सारा,
चौबीसी का रंग है प्यारा।
तीन लोक में सबसे न्यारा,
झंडा ऊँचा रहे हमारा॥

इन्द्रिय ज्ञान

झूठ कभी नहीं बोलेंगे, हम बोलेंगे साँच ।
देव, नारकी, मनुज, पशु की, इन्द्रिय होती पाँच ।

पाँच इन्द्रिय वाला प्राणी,
सकलेन्द्रिय कहाता है ।
दो से चार इन्द्रिय तक का,
विकलेन्द्रिय कहाता है ॥

मात्र स्पर्शन इन्द्रिय जिसके,
एकेन्द्रिय स्थावर वो ।
दो से पाँच इन्द्रियाँ होतीं,
कहलाते त्रस प्राणी वो ॥

पहली इन्द्रिय स्पर्शन है,
छूकर ज्ञान कराती है ।
दूसरी इन्द्रिय रसना है जो,
चखकर स्वाद बताती है ॥

तीजी इन्द्रिय घ्राण कहाती, गंध सुगंध बताये जो ।
चौथी नेत्र इन्द्रिय होती, वर्णों को दिखलाये वो ॥

पंचम इन्द्रिय कर्ण कहाती, स्वर का ज्ञान कराती है ।
बिना कर्ण के वाणी त्रस को, सुनने में ना आती है ॥

संज्ञी असंज्ञी जीव भेद दो,
है सकलेन्द्रिय की पहचान ।
मन बिन होता जीव असंज्ञी,
मन सहित संज्ञी को जान ॥

दुरुपयोग जो करते इनका,
वे दुर्गति में जाते हैं ।
सदुपयोग करने वाले तो,
निश्चित सद्गति पाते हैं ॥

पंचेन्द्रिय मन सहित मनुज हम,
निज पर हित में सक्षम हैं ।
स्थावर और असंज्ञी जन तो,
निज पर हित में अक्षम हैं ॥

देव शास्त्र गुरु आश्रय पा हम, शिवपथ को अपनायेंगे ।
जिनशासन की महिमा गाकर, दुनिया को बतलाएँगे ॥

कषाय भाव को त्यागेंगे

जो आतम को कसती है,
आतम में नित बसती है ।
वह कषाय कहलाती है,
भव-भव भ्रमण कराती है ।
चार भेद ताके जानो,
अतिशय दु:खकारक मानो ।
क्रोध अग्नि की ज्वाला है,
गुण पुञ्ज जलाने वाला है ।
क्रोध मान और माया है,
चौथा लोभ बताया है ।
क्रोध बुद्धि हर लेता है,
नरकों के दु:ख देता है ।

मान घमण्ड को कहते हैं,
मानी निर्गुण रहते हैं ।
मानी भव दु:ख पाता है,
हाथी भी बन जाता है ।
कपट नाम मायाचारी,
धर्म काटने की आरी ।
मायाचारी करते जो,
रोगी बनकर सड़ते वो ।
लोभ पाप का पापा है,
दुर्गति में पहुँचाता है ।
हम कषाय को छोड़ेंगे,
धर्म से रिश्ता जोड़ेंगे ।
कषाय कभी नहीं करना है,
हमें भवोदधि तरना है ॥

" हमें पाप को तजना है "

पापी पाप को करता है,
करनी का फल भरता है ।
जीव घात हिंसा जानो,
झूठ वचन मिथ्या मानो ॥
बिन पूछे लेता कुछ भी,
कहलाती वो ही चोरी ।
पर नर नारी में रमता,
कर कुशील फिर वो सड़ता ॥
वस्तु संग्रह पाप है,

परिग्रह दुःखकर साँप है ।
पाँच पाप दुःख साधन हैं,
पुण्य मनुज का शुभ धन है ॥
पाप दुःखों को देता है,
पुण्य दुःख हर लेता है ।
पुण्य सुखों का हेतु है,
शिवपुर का वह सेतु है ।
हमें पाप को तजना है,
पुण्य कार्य नित करना है ॥

हम भगवन् बन जायेंगे

अरिहंत प्रभु का आलय है,
कहते जिसे जिनालय हैं ।

वीतराग गत द्वेषी हैं,
वे सर्वज्ञ हितैषी हैं ।

दर्शन पाप नशाता है,
बुद्धि शुद्ध बनाता है ।

जो जिन मंदिर जाते हैं,
कभी नहीं दुःख पाते हैं ।

जिन मंदिर हम जायेंगे,
अक्षत पुञ्ज चढ़ायेंगे ।

अतिशय पुण्य कमायेंगे,
सारे पाप नशायेंगे ।

सबको मार्ग दिखायेंगे,
कभी न भव दुःख पायेंगे ।

भगवन् की भक्ति करके,
हम भगवन् बन जायेंगे ।

समवशरण में जाना है

तीर्थंकर की धर्म सभा,
मिले यहाँ पर पुण्य महा।
समवशरण कहलाता है,
सर्व शांति सुख दाता है॥
बैर भाव मिट जाते हैं,
सब मिल मोद मनाते हैं।
आठ भूमि चउ दरवाजे,
बारह सभा जहाँ साजे॥
मानस्तम्भ अति सुन्दर हैं,
जिनमें प्रतिमा मनहर हैं।
साँप नेवला गले मिले,
गाय सिंह भी संग चले॥
चूहा बिल्ली खेल रहे,
सबसे अच्छा मेल रहे।
समवशरण में जाना है,
सारे पाप नशाना है॥

" रात्रि भोजन पाप है "

रात्रि भोजन पाप है,
जैनों में अभिशाप है ।

दिन में भोजन करना है,
शाकाहारी बनना है ॥

जो रात में हैं खाते,
वही निशाचर कहलाते ।

हमें स्वस्थ गर रहना है,
भूख रात की सहना है ॥

दिन भोजन वरदान है,
करता जग कल्याण है ।

रातों में जो खाते हैं,
वे रोगी बन जाते हैं ॥

पेट में भोजन सड़ता है,
कीड़े पैदा करता है ।

जल्दी ही वो मरता है,
और नरक में सड़ता है ॥

रात्रि भोजन छोड़ेंगे,
धर्म से नाता जोड़ेंगे ।

यदि अच्छे बालक बनना,
तो दिन में भोजन करना ॥

शाकाहार

शाकाहारी महान है,
    माँसाहारी नादान है ।
शाकाहारी पुण्यात्मा,
    माँसाहारी पापात्मा ॥
शाकाहारी सज्जन है,
    माँसाहारी दुर्जन है ।
शाकाहारी आर्य है,
    माँसाहारी म्लेच्छ है ॥
दिन का भोजन शाकाहार,
    रात्रि भोजन माँसाहार ।
सब्जी रोटी शाकाहार,
    फास्ट फूड है माँसाहार ॥

घर का भोजन शुद्ध आहार,
    होटल भोजन अशुद्ध आहार ।
गर रोगों से बचना है,
    भोजन शुद्ध ही करना है ॥
शुद्ध भोजन से होगा धर्म,
    अशुद्ध भोजन से पाप कर्म ।
माँसाहार को त्यागेंगे,
    शाकाहार को धारेंगे ॥
बुराईयों को छोड़ेंगे,
    भलाई से नाता जोड़ेंगे ।
पापों से यदि बचना है,
    शाकाहार ही करना है ।

इन सबको फिर तजना है

''बाजार की मिष्ठान मिठाई, जीवन में बहुत दु:खदाई ।
रोगों को वो नित्य बढ़ावे, सेहत को वो सदा नशावे ॥

रोगों को पैदा करती है,
दुर्गुण से झोली भरती है ।
उसे खाने की जिद करते,
तो नरकों में वो सड़ते ॥
उनकी बुद्धि घट जाती,
अच्छाई भी मिट जाती ।
टॉफी, चॉकलेट, बर्गर भाई,
समझो इसे सदा दु:खदाई ।
मैगी है पापों की खान,
गंदा है इसमें सामान ।
यदि अच्छे बच्चे बनना है,
इन सबको फिर तजना है ॥''

माता-पिता की आज्ञा मानो

माता पिता की आज्ञा मानो,
निज कर्त्तव्य सदा पहचानो ।

गंदी बातें कभी न करना,
धर्म मार्ग से कभी न डरना ।

गंदे बच्चों से दूर रहो,
सदा प्रसन्न भरपूर रहो ।

न छिपाओ माँ-पिता से बात,
कभी न उनका छोड़ो साथ ।

मात-पिता उपकारी हैं,
ये सच्ची निधि हमारी हैं ।

बहुत बड़ा आशीष है उनका,
बहुत बड़ा हृदय है उनका ।

उनको कभी न छलना है,
सही मार्ग पर चलना है ।

दिल उनका न दुःखायेंगे,
सच्चा आशीष पायेंगे ।

सच्चा श्रावक कौन

सम्यक् श्रद्धा विवेकवान् जो,
सम्यक् किरिया करता है ।
सच्चा श्रावक कहलाता वो,
जो पापों से डरता है ॥
देव शास्त्र गुरु पूजन सेवा,
दान पुण्य जो करता है ।
तीर्थ यात्रा जप-तप व्रत करके,
जो भव दुःख को हरता है ॥
पंच अणुव्रत, गुणव्रत तीनों,
शिक्षाव्रत चारों पाले ।
षट् आवश्यक कार्य करे नित,
पूजादिक भी ना टाले ॥
दर्शन व्रत सामायिक प्रोषध,
सचित्त दिवा मैथुन त्यागी ।
ब्रह्मचर्य आरम्भ परिग्रह,
अनुमति व उद्दिष्ट त्यागी ॥
ये श्रावक की ग्यारह प्रतिमा
ऐलक क्षुल्लक पालें जो ।

मरण समाधि कर निश्चित ही,
सुर स्वर्गों में जावें वो ॥
समाधि मरण की करूँ भावना,
मुनिव्रत को भी धारूँगा ॥
अध्यात्म के बैठ भवन में,
शुद्ध स्वरूप निहारूँगा ॥
घाति–अघाति कर्म नाश कर,
मैं शिवपुर को जाऊँगा ।
शिवपथ मिला न जब तक मुझको,
मैं जिनवर को ध्याऊँगा,
आओ बच्चों हम सब मिलकर,
सबके प्राण बचायेंगे ।
दया धर्म का पालन करके,
हम भी शिवपुर जायेंगे ॥

हम अच्छे इंसान बनेंगे

हम अच्छे इंसान बनेंगे,
जन हित कर महान बनेंगे।

सदाचारी गुणवान् बनेंगे,
भक्ति कर भगवान् बनेंगे।

कार्य व्यर्थ के तुम छोड़ो,
निज को धर्म से तुम जोड़ो।

अनर्थ मार्ग से मुख मोड़ो,
लीक पाप की तुम तोड़ो।

हमें विवेकी बनना है,
सब सोच समझ के करना है।

मिथ्या दर्शन छोड़ेंगे,
सम्यक्त्व से नाता जोड़ेंगे।

अज्ञान पाप नशायेंगे,
सम्यग्ज्ञान को पायेंगे।

क्रिया पाप की छोड़ेंगे,
सद्व्रतों से नाता जोड़ेंगे।

अच्छी संगति करना है,
पाप कार्य से डरना है।

हम सबके आदर्श बनेंगे,
धरती के वरदान बनेंगे।

रात्रि भोजन छोड़ दो

रात्रि भोजन पाप है,
बहुत बड़ा अभिशाप है।
रात्रि भोजन करता जो,
रोगी होकर मरता वो।
वह नहीं स्वर्ग में जाता है,
नरकों के दु:ख पाता है।
लूला लंगड़ा बनता है,
निर्धन के भी खलता है।
दिन में जो भोजन करता,
वह सबकी पीड़ा हरता।
दिन भोजन वरदान है,
सज्जन की पहचान है।
वही आदर्श इन्सान है,
और भावी भगवान् है।
रात्रि भोजन त्यागेंगे,
मोह नींद से जागेंगे।
रात्रि भोजन छोड़ दो,
पाप से नाता तोड़ दो।

पञ्च बालयति

वासुपूज्य, मल्लि, नेमि, पार्श्व जिन,
वीर बालयति जानो ।
भैंसा, कलशा, शंख, सर्प अरु,
शेर चिह्न इनके मानो ॥
लाल, स्वर्ण व श्याम, हरित अरु,
स्वर्णिम वर्ण सदा मानो ।
बालयति की पूजा भक्ति,
करके अपना हित ठानो ॥

तभी सिद्ध बन पायेंगे

चार गति होती हैं भाई,
चारों ही होती दु:खदाई ।
नरक पशु नर, सुरगति जानो,
क्रम से पाप पुण्य फल मानो ॥
नरक गति में दु:ख हैं भारी,
होती है जहाँ मारा-मारी ।
नहीं अन्न का दाना मिलता,
फूल खुशी का कभी न खिलता ॥
एक बूँद पानी भी नहीं है,
सुख शांति तो बिल्कुल नहीं है ।
अण्डा माँस जो खाते हैं,
वो नरकों में जाते हैं ॥
पशु पक्षी तिर्यंच कहाते,
मूक वेदना से अकुलाते ।

बोझा ढोते हैं दिन रात,
बड़े बुरे इनके हालात ॥
मायाचारी करते जो,
फिर तिर्यंच बनते वो ॥
जो जिन मंदिर जाते हैं,
दान देय हर्षाते हैं ।
वे नर राजा बनते हैं,
मुनि बन कर्म को हनते हैं ॥
जिन धर्म ध्वजा जो फहराते,
वे निश्चित सुरगति पाते ।
सुरगति में सब भौतिक सुख हैं,
भूख प्यास का नहीं दुःख है ॥
चारों गति को छोड़ेंगे,
मोक्ष से नाता जोड़ेंगे ॥
मुक्ति को पंचम गति कहते,
सभी सिद्ध उसमें ही रहते ।
हम भी कर्म नशायेंगे,
तभी सिद्ध बन पायेंगे ॥

मोक्षपुरी की रेल

रेल चली भई रेल चली, दस डिब्बों की रेल चली...।
मुनिधर्म का स्टेशन है, घूमे आतम गली-गली...॥

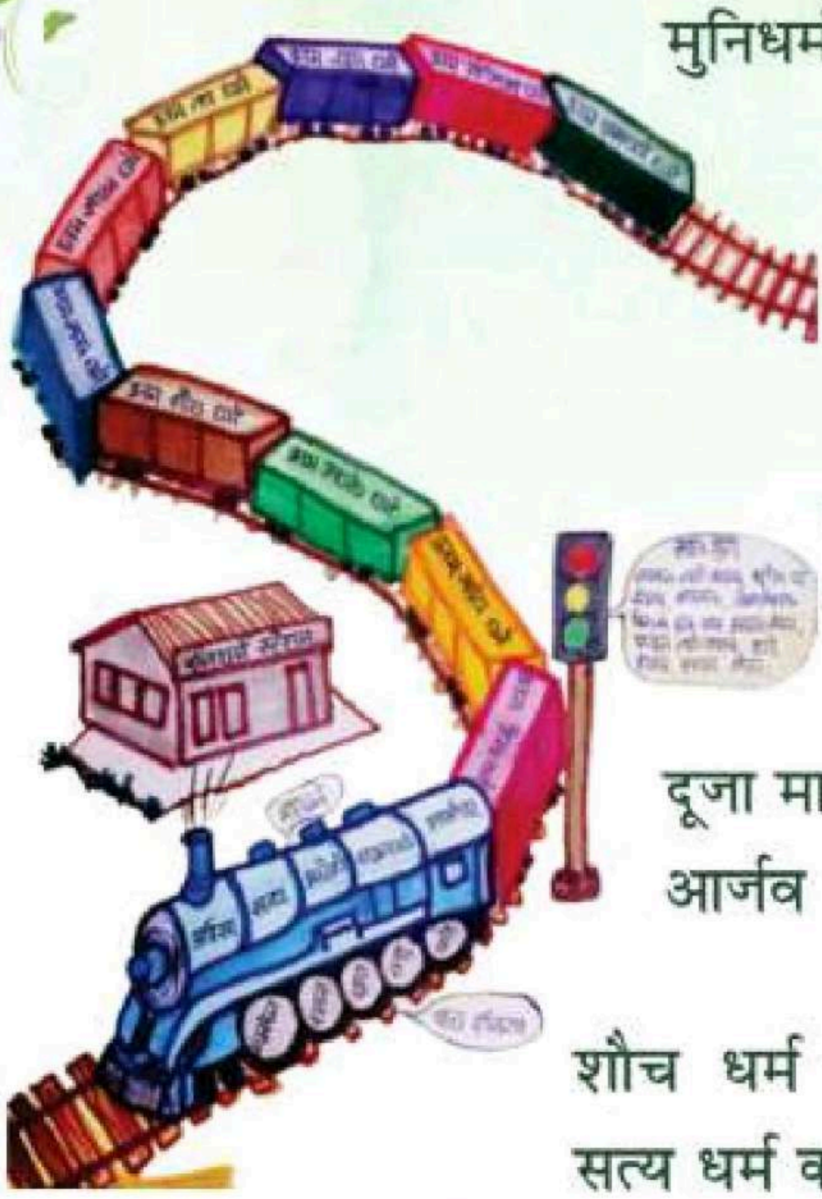

महाव्रतों का इंजन इसमें और समितियाँ चालक हैं ।
इन्द्रिय दमन हैं पहिये इसके, खिड़की षट्आवश्यक हैं ॥

सात गुणों के सिग्नल देखो, चौंतिस गुण की पटरी है ।
उत्तम क्षमा है डिब्बा पहला, बाँधे क्रोध की गठरी है ॥

दूजा मार्दव धर्म का डिब्बा, मान का खण्डन करता है ।
आर्जव धर्म तीसरा डिब्बा, मायाचारी हरता है ॥

शौच धर्म चौथे को कहते, सारा लोभ नशाता है ।
सत्य धर्म का पंचम डिब्बा, शाश्वत सुख दिखलाता है ॥

छटवाँ डिब्बा संयम कहता, पाप त्याग संयम धारो ।
डिब्बा सप्तम तप का कहता, कर्म शैल को संहारो ॥

अष्ठम डिब्बा महात्याग का, चउविध दान सदा देना ।
किञ्चित् तेरा नहीं है जग में, आंकिचन नौवा लेना ॥

ब्रह्मचर्य का दसवाँ डिब्बा, जीवन में अपनायेंगे ।
दस धर्मों की बैठ रेल में, मोक्षपुरी हम जायेंगे ॥

"संसार दृश्य दर्पण"

जीवन को इक पेड़ सा मानो, लटका मनुज जीव पहचानो ।
कूप भयंकर दिखता है, संसारी इसी में बसता है ॥

चार सर्प चउगति जानो, शाखा को आयु मानो ।
श्याम श्वेत दो चूहे देखो, कृष्ण शुक्ल दो पक्ष हैं लेखो ॥

आयु शाखा काट रहे हैं, सबका जीवन छाँट रहे हैं ।
मधु छत्ता सांसारिक सुख है, मक्खी काटे इक भव दु:ख है ॥

गज विकराल को काल कहा है, जीवन तरु उखाड़ रहा है ।
ये संसार दृश्य दर्पण है, इसमें दु:खदाई तड़पन है ॥

विद्याधर युगल जो भाई, गुरु सच्चे निर्ग्रंथ सहाई ।
इनकी सीख सदा उर धरिये, भवदधि तरने सुकृत करिये ॥

जिनवाणी को उर धारेंगे, सब पापो को संहारेंगे ।
गर भव दु:ख से बचना है, गुरु शिक्षा चित धरना है ॥

"गर हमको आगे ही बढ़ना है"

सही समय कक्षा में जाओ,
गुरु को पहले शीश झुकाओ ।

अपना पाठ याद तुम करना,
पाप कार्य से सदा ही डरना ॥

झूठ कभी भी मत बोलो तुम,
निंदा से भी मुख मोड़ो तुम ।

चोरी कभी न करना है,
निश में कुछ नहीं चरना है ॥

पूज्यों का सम्मान करो,
किसी का मत अपमान करो ।

सदा सत्य ही तुम बोलो,
शब्दों में मिश्री घोलो ॥

सदाचार को नित पालो,
गुरु की आज्ञा मत टालो ।

अच्छाई के सिंधु बनो,
यश कीर्ति के इंदु बनो ॥

सबका आदर करना है ।
गर आगे ही बढ़ना है ॥

स्याद्वाद

आओ सुनायें अच्छी बात,
इक राजा के बेटे सात ।

सातों ही जनम से अंधे,
किन्तु उनके मन नहीं गंदे ॥

इक दिन सुन हाथी की चर्चा,
हाथी देखन को मन ललचा ।

वन में गये मंत्री के साथ,
राह में की हाथी की बात ॥

तभी सामने से गज आया,
राजकुमारों को बुलवाया ॥

मंत्री बोला आओ साथी,
छूकर के तुम देखो हाथी ॥

पुत्र एक गज सूंड पकड़कर,
पाइप सा है कहा अकड़कर ॥

दूजे ने पकड़ी फिर पूँछ,
रस्सी सा हाथी ये खूब ॥

तीजा पैर पकड़कर डोला,
खंभा सा हाथी है बोला ॥

चौथे ने पकड़ा फिर कान,
सूपे सा हाथी है मान ॥

पुत्र पाँचवा पकड़े पीठ,
है चबूतरा सा ये ठीक ॥

छठवाँ दाँत पकड़ कहता,
तुरही सा हाथी रहता ॥

सप्तम पेट पकड़ बैठा,
भित्ती सा हाथी ऐंठा ॥

वन से लौटे जब सुकुमार,
मंत्री पूछे उन्हें पुकार ।

हाथी कैसा लगा कुमार,
बतलाना राजा के द्वार ।

जिसने पकड़े जो जो अंग,
उसे ही हाथी माना चंग ।

हुआ विवाद सातों में जब,
स्याद्वाद समझाया तब ॥

एक अपेक्षा तुम सब सच हो,
पूर्ण अपेक्षा सभी असच हो ।

करे विवादों का जो अंत,
स्याद्वाद उसे कहते संत ॥

स्याद्वाद जिनशासन प्राण,
सब जीवों को देता प्राण ।

स्याद्वाद बिन कोई प्राणी,
नहीं बन सकता सच्चा ज्ञानी ।

स्याद्वाद अपनायेंगे,
सम्यग्दृष्टि पायेंगे ।

यदि वाद विवाद मिटाना है,
तो स्याद्वाद अपनाना है ॥

भगवान् महावीर के नाम

वर्तमान जिन शासन नायक,
महावीर जिन कहलाते ।
आओ बच्चों हम सब मिलकर,
उनकी महिमा बतलाते ॥

श्री वृद्धि सर्वत्र हुयी थी,
गर्भ में प्रभुजी आये थे ।
चौदह कोड़ि रतन जु बरसे,
नित-नित मंगल छाये थे ॥
देव इन्द्र नित पूजन करते,
जनता ने सुख पाये थे ।
इससे जग में त्रिशलानंदन,
'वर्धमान' कहलाये थे ॥

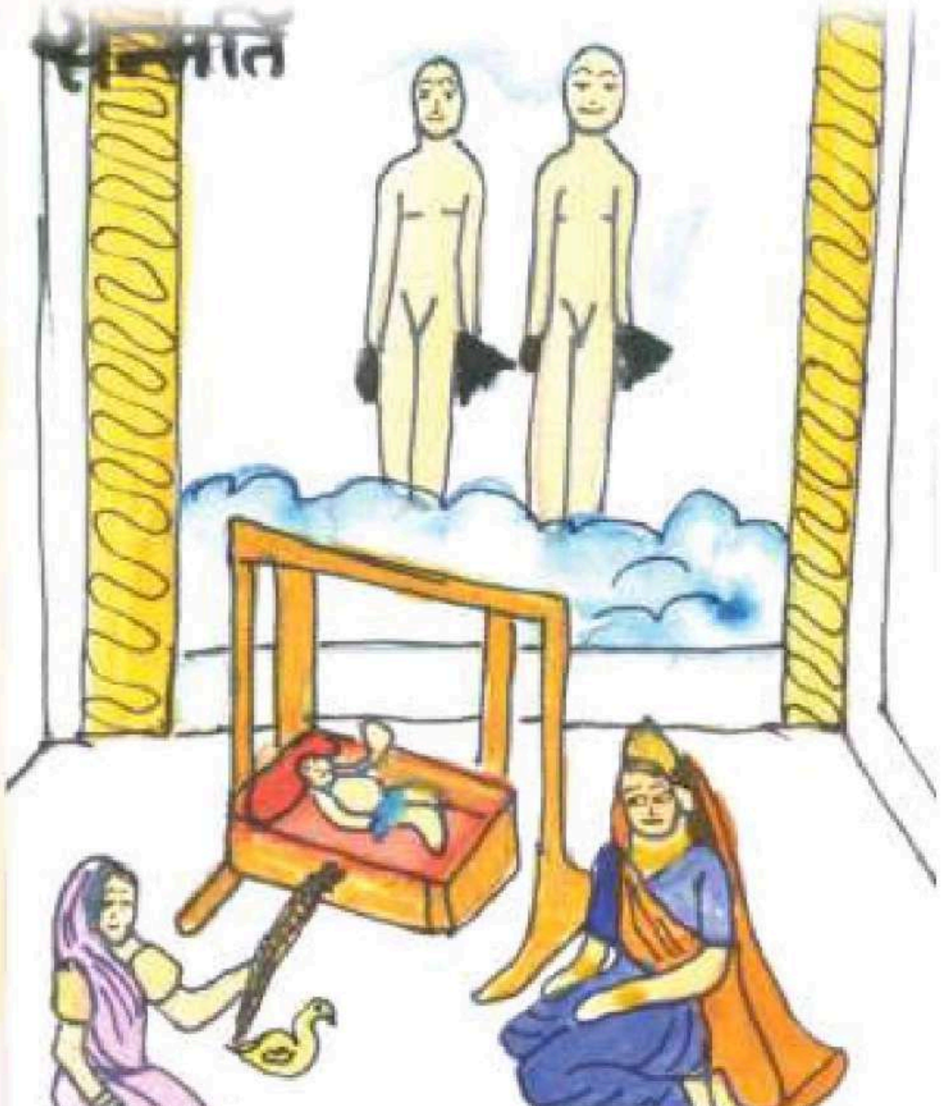

एक दिवस सिद्धार्थ दुलारे,
पलना में जब झूल रहे ।
आये वहाँ पर मुनि युगल तब,
आत्मतत्त्व को भूल रहे ॥
वर्धमान के दर्शन पाकर,
शंका सारी हो गई दूर ।
नाम दिया उनको तब सन्मति,
तत्त्वज्ञान पाया भरपूर ॥

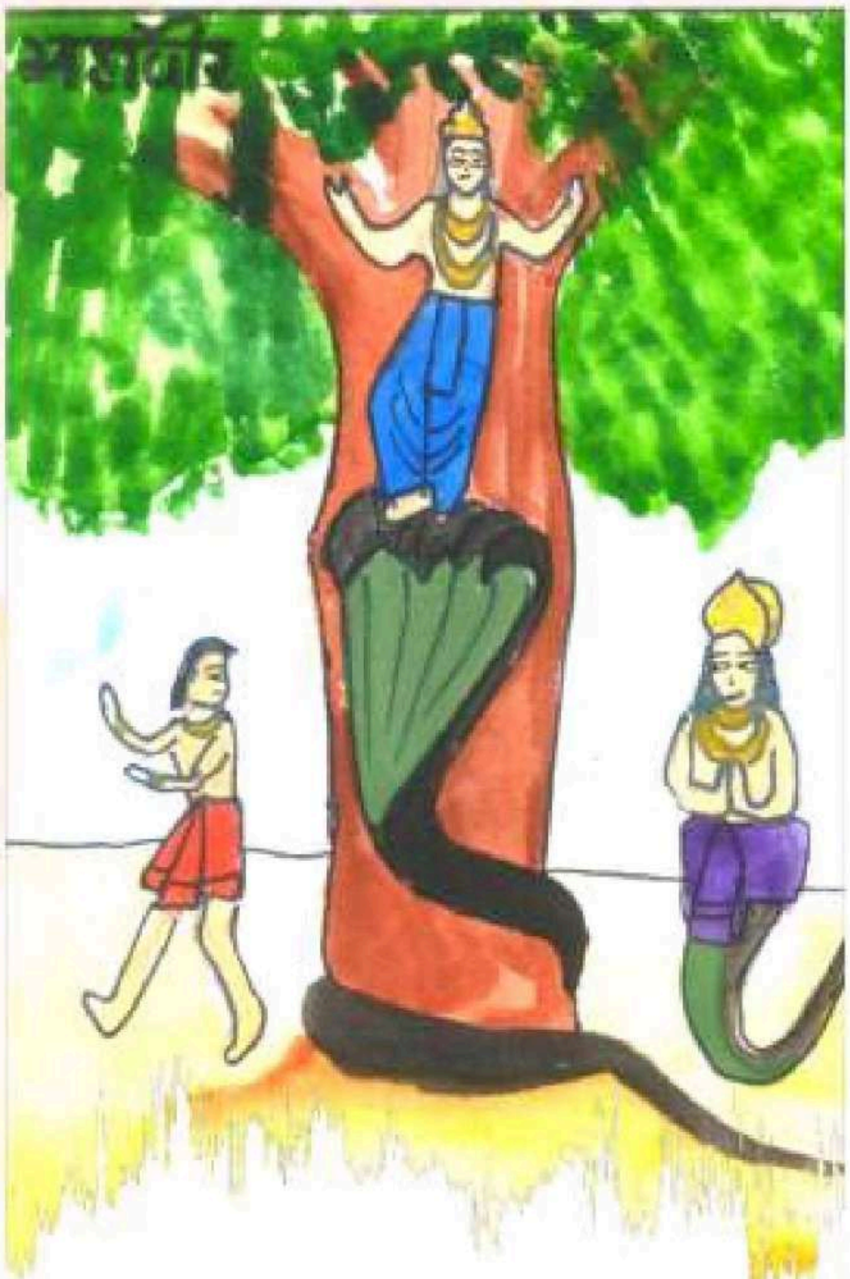

खेल खेल में एक देव जब,
सर्प रूप धर आया था ।
लिपट गया वह तरुवर से,
बच्चों को खूब डराया था ॥
तरु लिपटे विषधर को वश कर,
"महावीर" कहलाये थे ।
सर्व हितैषी शांति वीर के,
सबने ही गुण गाये थे ॥

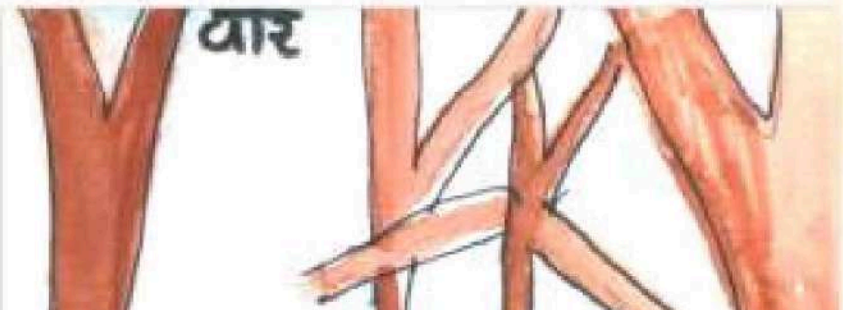

एक दिवस उच्छ्रंखल हाथी,
दौड़-दौड़ नर मार रहा ।
क्रूर काल विकराल भयानक,
देख मनुज तन छोड़ रहा ॥
वर्धमान ने उसको वश कर,
"वीर" नाम पदवी पाई ।
वैशाली की जनता ने भी,
हर्षित हो भक्ति गायी ॥

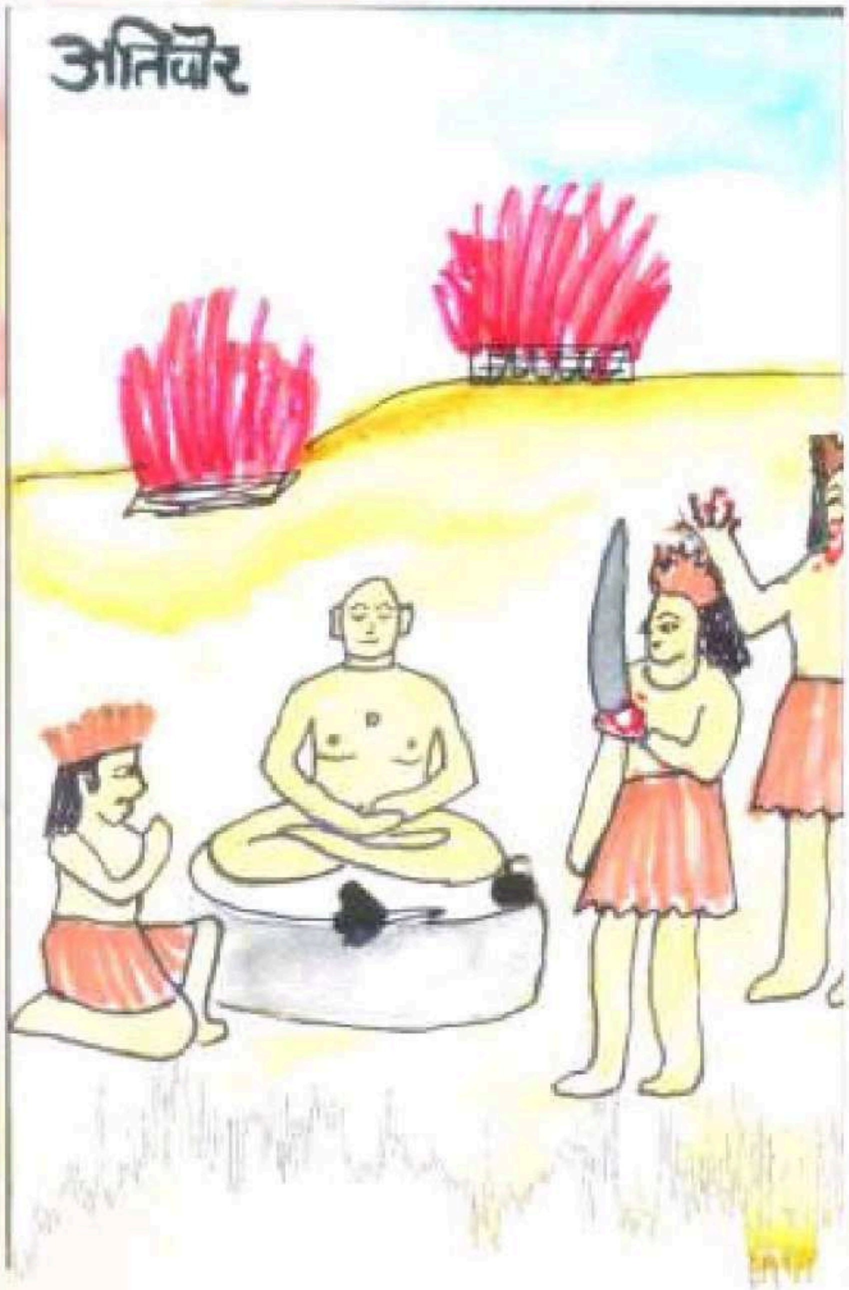

संगम देव ने मरघट में जब,
वीर ध्यान मुद्रा देखी ।
किया उपसर्ग बहुत ही उन पर,
ना निज की हानि लेखी ॥
वर्धमान ने समता धर कर,
तब उपसर्ग को झेला था ।
संगम देव हार बना फिर,
''अतिवीर'' का चेला था ॥

पाँच नाम धारक महावीर,
बालयति तीर्थंकर हैं ।
हम उनकी भक्ति करते,
जो प्राणी मात्र हितंकर हैं ॥
आओ हम सब वीर प्रभु की,
मन वच तन से जय बोलें ।
पुण्य कोष से चित को भर लें,
पाप पंक अपने धोलें ॥

'धनदत्त'

धनदत्त नाम का ग्वाला था,
मन में अति मतवाला था ।
गाय चराने जाता था,
अच्छे मजे उड़ाता था ॥
कंदुक खेल रहा साथी संग,
तभी खेल में पड़ गई भंग ।
गेंद गिरी तालाब में भाई,
टोली ग्वालों की चिल्लाई ॥
उसको कौन निकालेगा,
अपना काम सम्हालेगा ।

धनदत्त तालाब में कूद पड़ा,
गेंद लाने को आगे बढ़ा ॥
सहस्र कमल जब देखा भाई,
आँखें उसकी भी ललचाई ।
सहस्र कमल को उसने तोड़ा,
खेल-खेलने से मुख मोड़ा ॥
तभी यक्ष देव ने आकर,
पूछा उससे भृकुटी चढ़ाकर ।
बिन आज्ञा के फूल क्यों तोड़ा,
क्यों पापों से नाता जोड़ा ॥

अब मैं तुझको मारूँगा,
फिर अपने घर जाऊँगा ।
धनद गोप ने माँगी माफी,
बोला यक्ष नहीं ये काफी ॥
पहले बता मुझे इक बात,
क्या करेगा इस फूल के साथ ।
इसको किसे चढ़ाएगा,
क्या पत्नी को लाड़ लड़ाएगा ॥
इसे चढ़ाना सबसे बड़े को,
धर्म मार्ग में सदा खड़े जो ।

ऐसा कर दिखलाऊँगा,
फूल चढ़ा मैं आऊँगा ॥
बड़ा मान निज स्वामी को,
फूल दिया सेठानी को ।
बोली मैं नहीं सेठ बड़े हैं,
धर्म मार्ग में वही खड़े हैं ॥
पूरी बात सेठ ने पूछी,
मुनिराज की साख है ऊँची ।
मुनि मंदिर में ध्यान लगाते,
निज पर हित की बात बताते ॥

मुनि बोले जिनराज बड़े हैं,
कायोत्सर्ग में यहाँ खड़े हैं ।
धनद फूल जिन चरण चढ़ाया,
भक्ति की और मोद मनाया ॥
हाथ पैर उसने नहीं धोए,
पाप कर्म उसने फिर बोए ।
अगले भव में बन गया राजा,
भौतिक वैभव से मन साजा ॥
हाथ पैर में खुजली पाई,
करकंडु नाम हुआ तब भाई ।

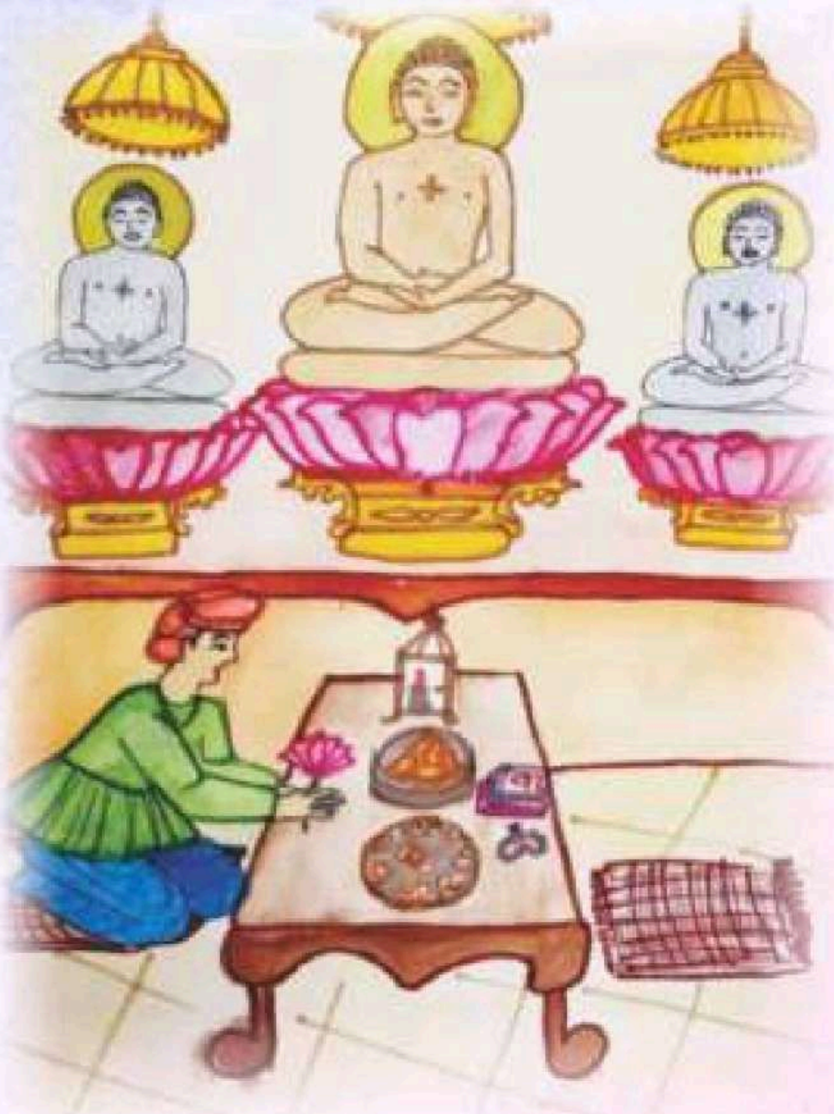

मुनि से इसका कारण जाना,
पड़ा गलती पर फिर पछताना ॥
हाथ पैर धो मंदिर जाओ,
झूठे मुँह न मंदिर आओ ।
मंदिर में कभी शोर करो ना,
आपस में तुम कभी लड़ो ना ॥
अच्छे बालक सदा बनो तुम,
सदा भले ही काम करो तुम ।
प्रभु आज्ञा अपनाना है,
विधिवत् मंदिर जाना है ॥

सुभग ग्वाला

अंग देश में चंपा नगरी,
प्रजा सुखी थी वहाँ पर सगरी।
धाड़ीवाहन वहाँ के राजा,
वृषभदास सेठ शुभ साजा ॥
सुभग नाम का था इक ग्वाला,
सीधा साधा भोला भाला ।
वन जाता था गाय चराने,
मित्रों के संग मोद मनाने ॥

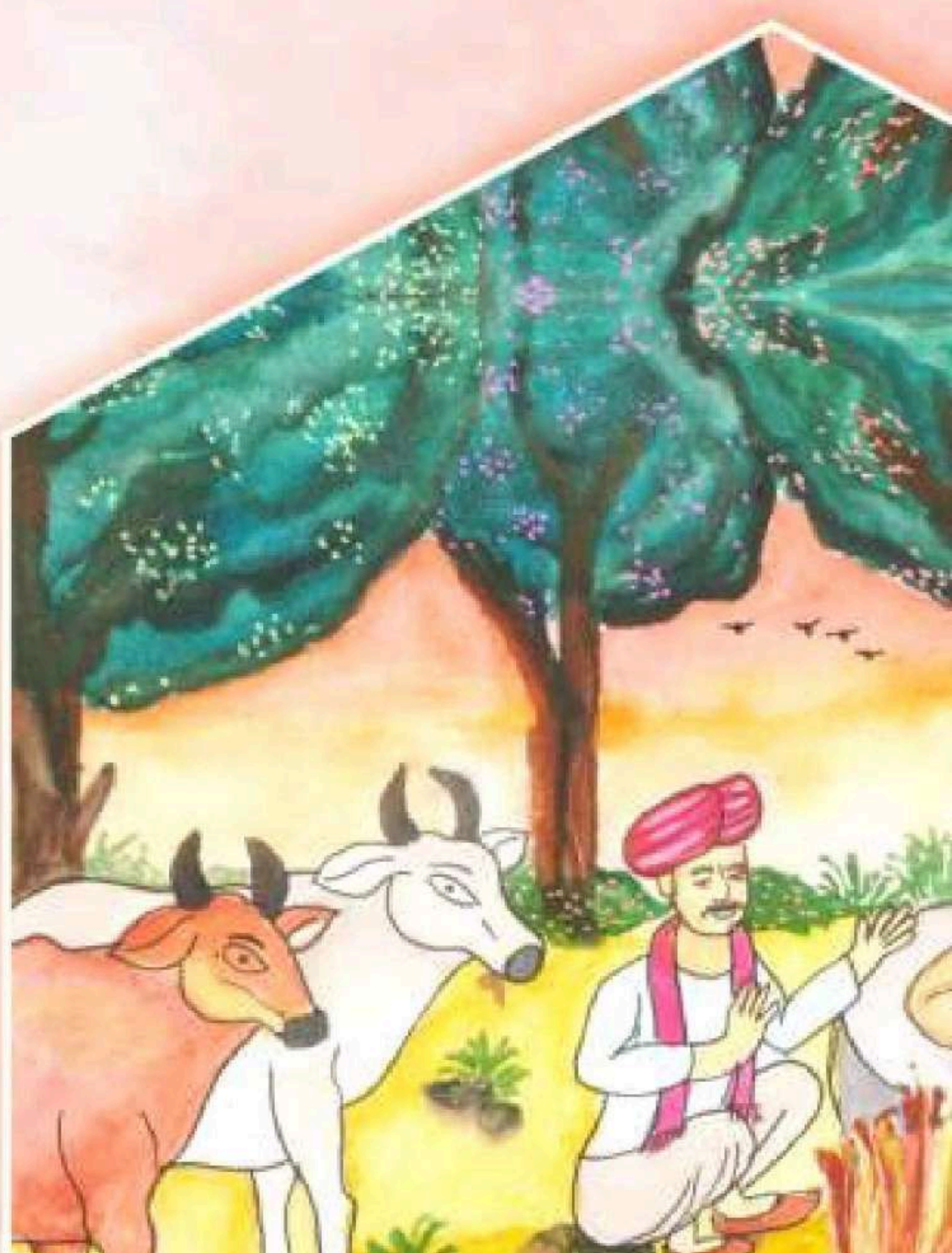

लौट रहा इक दिन जंगल से,
पृथ्वी काँप रही सर्दी से ।
यथाजात मुनिराज दिखे जब,
करुणा जागी थी मन में तब ॥
ये धरती के देव दिखत हैं,
सबके अच्छे भाग्य लिखत हैं ।
गाय छोड़ सेवा में आया,
अग्नि जलाकर शीत भगाया ॥

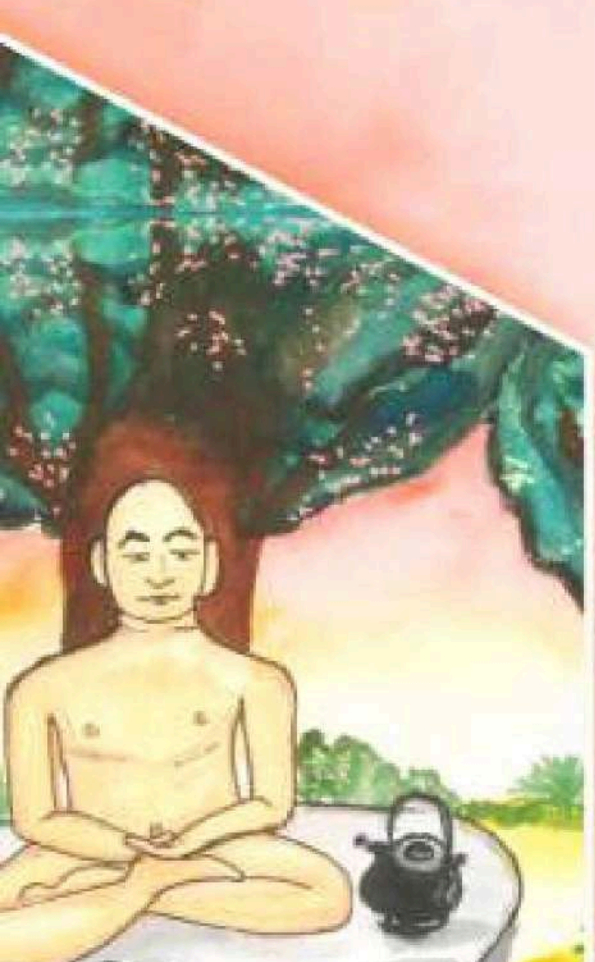

पूर्णरात भर सेवा कीनी,
इक क्षण नींद न उसने लीनी ।
प्रातः मुनि से करी प्रार्थना,
मुझको हितकर देओ देशना ॥
'णमो अरिहंताणं' मुनि बोले,
चले आकाश में हौले-हौले ।
देख बड़ा आश्चर्य हुआ तब,
पा वरदान खुशी हुई तब ॥

"णमो अरिहंताणं" ही बोले,
पाप कर्म भी उसने धोले ।
वृषभदास सेठ ने पूछा,
किसने दिया मंत्र ये ऊँचा ॥
श्रावक जैन बन गया भाई,
कहाँ से तूने यह निधि पाई ।
भोजन अब तू यहीं पर करना,
नहीं अभक्ष्य से पेट को भरना ॥

इक दिन गरिष्ठ हलवा पूड़ी खाकर,
सो गया पेड़ के नीचे जाकर ।
बारिश बहुत जोर से बरसी,
गाय भागें डरतीं - डरतीं ॥

मित्र ग्वाल ने उसे जगाया,
गायों का फिर भेद बताया ।
बहती देख गाय नाले में,
कूद पड़ा वह भी नाले में ॥

एक ठूंठ तब चुभा उदर में,
मंत्र पढ़ा तब ही निज मन में ।
गर साधु सेवा फल पाऊँ,
वृषभदास का पुत्र कहाऊँ ॥
'सुदर्शन सेठ' नाम तब पाया,
वृषभदास का पुत्र कहाया ।
जैन धर्म की साधना करके,
मोक्ष गये भव सागर तरके ॥
पटना सिद्धक्षेत्र कहलाया,
भक्तों ने मंदिर बनवाया ।

साधु सेवा पाप नशाती,
भव सागर से पार लगाती ॥
मंत्र जीव की रक्षा करता,
तीन लोक में वह नहीं डरता ।
''णमोकार की जाप करो,
अपनी रक्षा आप करो ॥

DOODLE YOUR ART HERE-

'राजा वसु'

वसु नाम का राज कुमार, विद्या पाई थी सुखकार ।
नारद पर्वत इनके मित्र, क्षीरकदंब गुरु परम पवित्र ॥
अज का अर्थ इक दिन बतलाया, ब्रह्मा, बकरा, धान कहाया ।
हवन प्रसंग में धान ग्राह्य है, बकरा ब्रह्मा अर्थ बाह्य है ॥

धान पुराना अर्थ तुम लेना, उल्टा अर्थ कर पाप न करना ।
कालांतर में राजा वसु ने, वैभव पाया यश भी उसने ॥
नारद पर्वत में हुआ विवाद, वसु के पास पहुँचा संवाद ।
हवन समय में अज का अर्थ, बकरा कहकर किया अनर्थ ॥

नारद बोला बकवाद व्यर्थ है, बकरा कहना महा अनर्थ है ।
गुरु ने पुराना धान बताया, हवन कार्य का मार्ग सिखाया ॥
अपनी बात पर अड़ गया पर्वत, वसु से न्याय माँगा था झटपट ।
पर्वत गुरु माँ का था बेटा, किन्तु भाग्य से था वह हेटा ॥

वसु ने पक्ष लिया पर्वत का, यूँ अपमान किया नारद का ।
झूठ नहीं तुम बोलो भाई, वहाँ बैठी जनता चिल्लाई ॥
नारद बोला सत्य कहो नृप, सुनकर झूठ कहेगा क्या जग ।
वसु ने किसी की एक न मानी, पर्वत को जय देनी ठानी ॥

तभी वसु का आसन टूटा, सबने देखा राजा झूठा ।
आसन भूमि माँहि समाया, वसु राजा ने प्राण गँवाया ॥
सीधा गया नरक में मरकर, जहाँ नारकी भूनें तलकर ।
बड़े-बड़े दु:ख नरक में भाई, अतः न करना पाप कमाई ॥

झूठ बोलना पाप है, मानव को अभिशाप है ।
झूठ कभी ना बोलेंगे, नरक द्वार न खोलेंगे ॥

मेंढ़क

नागदत्त नाम का सेठ था भाई,
पाप कार्य की करे कमाई ।
मायाचारी करता था,
रोज तिजोरी भरता था ॥
सामायिक आदि नित पाले,
मन से पाप कभी न टाले ।
तन से पुण्य कार्य भी करता,
मन को छल-कपटों से भरता ॥
इक दिन नियम लिया था ऐसे,
करूँ सामायिक मुनि के जैसे ।
जब तक सम्मुख दीप जलेगा,
तब तक वह भी नहीं हिलेगा ॥
भवदत्ता सेठानी आई,
बुझता दीप लख तेल बढ़ायी ।
बड़ी जोर से प्यास सतावे,
सेठ सामायिक छोड़ न पावे ॥
मन तो पानी-पानी माँगे,
धर्म ध्यान में मन ना लागे ।
मेंढ़क बना सेठ वो मरकर,
निज बावड़ी में जन्मा दलकर ॥
इक दिन निज पत्नी को देखा,
समझ गया कर्मों का लेखा ।

अवधि ज्ञानी सुव्रत मुनि ने,
हाल बताया सुना था सबने ॥
आर्त्त ध्यान से बना हूँ मेंढ़क,
पापों को भोगूंगा कब तक ।
इक दिन समवशरण था आया,
राजगृही में हर्ष था छाया ॥
राजा श्रेणिक बड़े दयालु,
जीवमात्र पर बड़े कृपालु ।
जा रहे थे समवशरण में,
गज सवार हो वीर चरण में ॥
मेंढ़क भी भक्ति से आया,

कमल पांखुड़ी मुख में लाया ।
हाथी के वह पगतल आकर,
मरकर देव बना दिवि जाकर ॥
समवशरण में पहुँचा भाई,
मेंढ़क चिह्न मुकुट प्रगटाई ।
राजा श्रेणिक ने जब देखा,
इन्द्रभूति ने ऐसे लेखा ॥
सच्ची भक्ति है सुखदायी,
मेंढ़क ने सुर पदवी पायी ।
मायाचारी का फल देखो,
सेठ बना तब मेंढ़क देखो ॥
मायाचारी कभी न करना,
सच्ची भक्ति मन में धरना ।
मायाचारी छोड़ेंगे,
भक्ति से मन जोड़ेंगे ॥

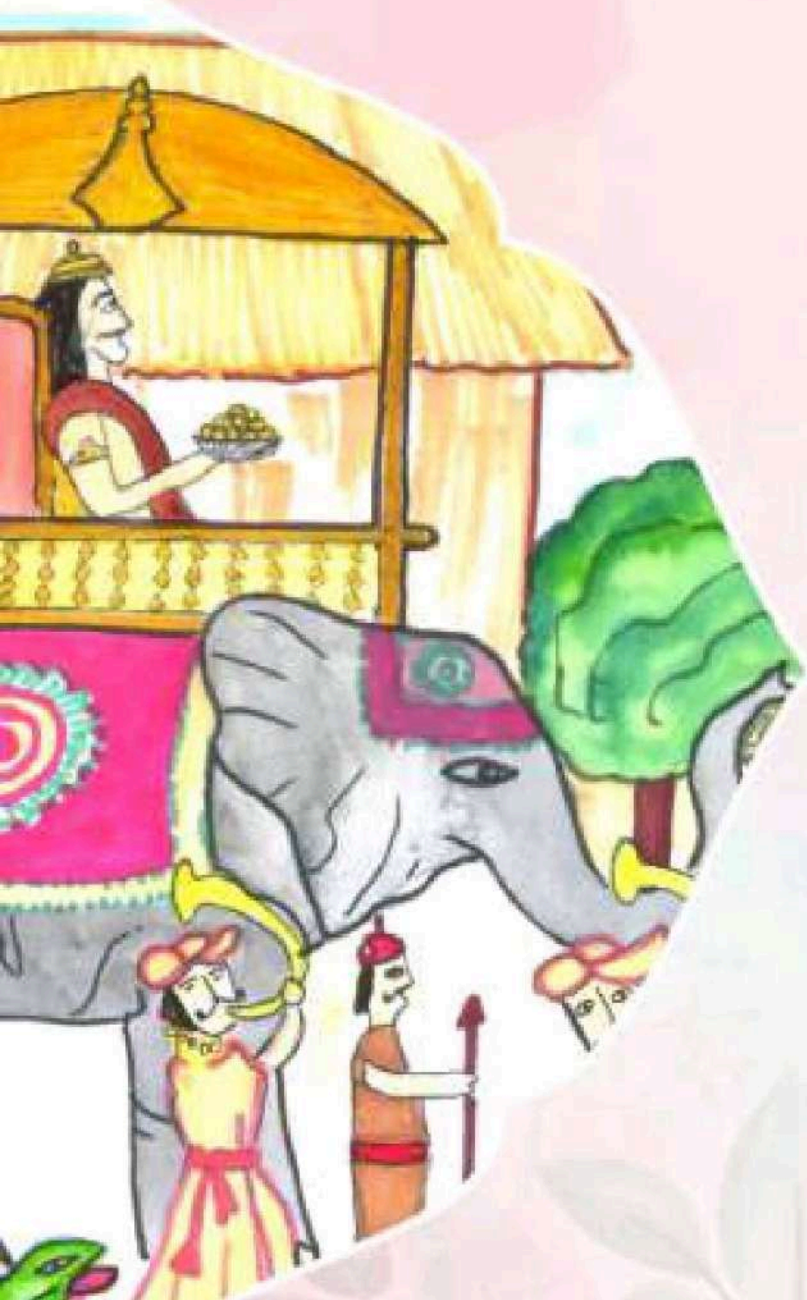

'श्मश्रुनवनीत'

'लुब्धक' नामक था इक याचक, तीव्रपाप फल का था भाजक ।
नगर - नगर में माँगे भीख, देता दुनिया को वह सीख ॥

रोटी मठा माँगकर खाता, प्रतिदिन मोटा होता जाता ।
लंबी दाढ़ी मूँछ बढ़ायी, मट्ठा वो पीता सुखदायी ॥

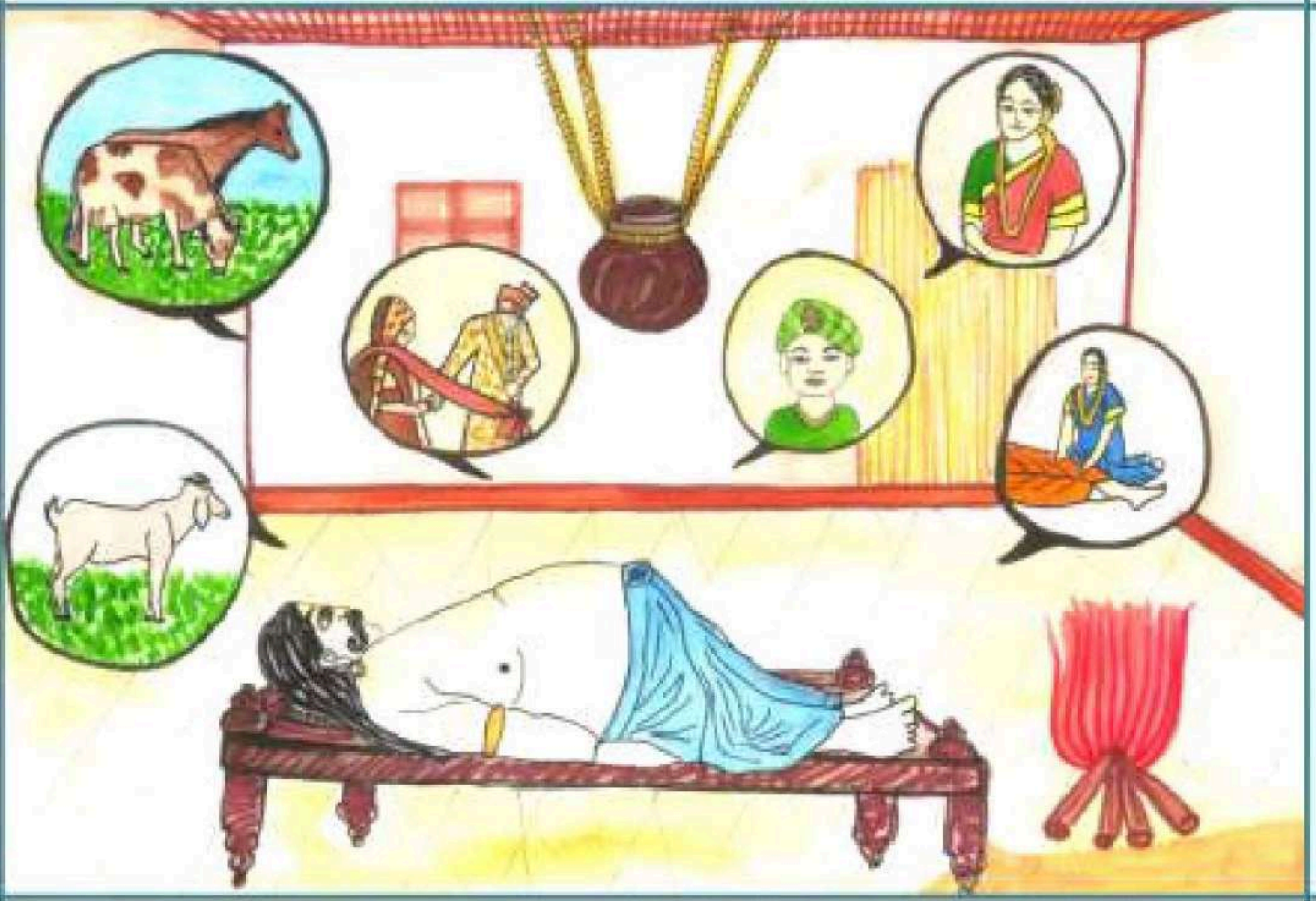

मूँछों में मक्खन भर जाता, और इकट्ठा करता जाता ।
महिनों वर्षों तक यूँ करके, जोड़ा मक्खन मटकी भरके ॥

लुब्धक दत्त ने लोभ बढ़ाया, वह श्मश्रुनवनीत कहाया ।
इक दिन मौसम बिगड़ा भाई, ठंडी हवा चले दु:खदायी ॥

अपनी झोंपडी में वो सोया, सिगड़ी जला सोच में खोया ।
मक्खन घड़ा टँगा था आगे, उसको देख-देखकर जागे ॥

घड़ा देखकर सोचे ऐसे, बनूँ सेठ मैं भी फिर कैसे ।
बेच इसे मैं बकरी लाऊँ, बकरियों को फिर और बढ़ाऊँ ॥

गाय भैंस और घोड़ी लाकर, घृत मैं बेचूँ नगर में जाकर ।
तभी सेठ मैं बन पाऊँगा, अपनी शादी कर पाऊँगा ॥

सुंदर, सुशील, सुलक्षण नारी, होवे मोको अति ही प्यारी ।
पुत्र रत्न को पाऊँगा, भारी हर्ष मनाऊँगा ॥

पत्नी पैर दबायेगी, मेरा चित्त लुभायेगी ।
पैर दबाना तू ना जाने, अपनी अपनी ही बस ताने ॥

ऐसे डाँट लगाऊँगा, ऊपर से लात जमाऊँगा ।
चिंतन में ऐसा सोया, निज विवेक बुद्धि खोया ॥

लगा पैर मटकी में जाकर अग्नि भड़की घी को पाकर ।
जली झोंपड़ी धूँ-धूँ करके, वो चिल्लाया हूं हूं करके ॥

अग्नि लपट से बच नहीं पाया, भारी रोया और चिल्लाया ।
तभी मृत्यु को गले लगाकर, दुर्गति हुई नरक में जाकर ॥

लोभी लुब्धक दत्त का किस्सा, नीति दायक कथा का हिस्सा ।
लोभ कभी मत करना भाई, दोनों लोकों में दुःखदायी ॥

लोभ पाप का बाप कहाया, हर लोभी ने बहु दुःख पाया ।
लोभ कभी नहीं करना है, तोष चित्त नित धरना है ॥

तुम भी सभी लोभ को त्यागो, मोह नींद से जल्दी जागो ।
संतोषी सुख पाता है, नित नित मौज उड़ाता है ॥

जिनवाणी की मानेंगे कभी ना जिद को ठानेंगे ।
अच्छे बच्चे लोभ करें ना, सच्चे बच्चे क्रोध करें ना ॥

गंदे बच्चे मानी होते, जिद्दी और अज्ञानी होते ।
माता पिता की मानो बात, गुरु चरण में रक्खो माथ ॥

मृगसेन धीवर

मृगसेन नाम का धीवर था,
मछली मारा करता था ।
इक दिन मुनि के दर्शन पाकर,
नियम लिया था मन हर्षाकर ॥

पहली मछली न मारूँगा,
भले ही प्राणों को त्यागूँगा ।
हुई परीक्षा लगातार जब,
मछली छोड़ी पाँच बार तब ॥
मृत्यु को गले लगाया था,
नियम को नहीं नशाया था ।
'धनकीर्ति' वह पुत्र हुआ,
राजगुणों से युक्त हुआ ॥
कई बार हुई रक्षा उसकी,
महाविभूति श्रेष्ठ थी जिसकी ।
ना चिंता की प्राण की,
राह लही निर्वाण की ॥
हम भी दया को पालेंगे,
अपने सब दु:ख टालेंगे ।
दयावान् तुम भी बनना,
जीवों की रक्षा करना ॥

अंजनचोर

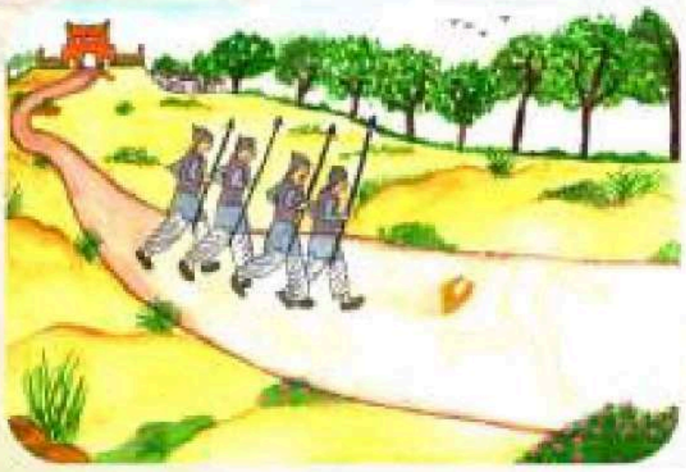

ललितांग नाम का राजकुमार, पाया उसने लाड़-दुलार ।
माता-पिता का एक ही बेटा, संस्कारों से था वो हेटा ॥

कुसंगति की पड़ गयी छाया, सप्त व्यसन में समय गँवाया ।
माँ ने सजा से उसे बचाया, पिता ने देश से दूर भगाया ।

ललितांग बन चोर कुनामी, करने लगा धर्म बदनामी ।
सिद्ध करी अंजन की गुटिका, पर को देखे खुद नहीं दिखता ॥

अंजन नाम का चोर कहाया, कोतवाल भी पकड़ न पाया ।
वेश्या की बातों में आया, इक रानी का हार चुराया ॥

हार की चमक छिपा न पाया, सैनिक ने फिर पता लगाया ।
अंजन चोर का पीछा कीना, खोजे चोर उपाय नवीना ॥

सोमदत्त इक बटुक को देखा, नभगामी विद्या को लेखा ।
रस्सी काटना था छींके से, शस्त्र गढ़े पैने नीचे से ॥

सोमदत्त का मन घबराया, अंजन प्राण बचाने आया ॥
विधि सीख कर उस विद्या की, अंजन सुध भूला पीड़ा की ।

महामंत्र जप करते-करते, रस्सी काटो इक-इक करके ।
महामंत्र वह जाने नाँहि, श्रद्धा अचल हुई मनमाँहि ॥

आणं ताणं कछु न जाणं, बोला सेठ वचन परमाणं ।
क्षण में काटी रस्सी सारी, विद्या सिद्ध हुई सुखकारी ॥

कैलाश गिरि पर उसने जाकर, दीक्षा ली वैराग्य बढ़ाकर ।
दुर्द्धर तप फिर उसने कीना, सब कर्मों को था नश दीना ॥

मुक्ति पुरी को उसने पाया, जग में वो भगवान् कहाया ।
जो भी जैन धर्म को पाले, निश्चित पाप कर्म दुःख टाले ॥

धनंजय कवि

एक धनंजय सेठ दयालु, जीव मात्र पर सदा कृपालु।
जिनवर की नित पूजा करते, साधु सेवा से दुःख हरते।
एक दिवस काले भुजंग ने, सेठ पुत्र को डसा पैर में।
सेठ लीन जिन पूजा में था, पत्नी ने भेजा संदेशा।
पूजा छोड़ो शीघ्र ही आओ, और बालक के प्राण बचाओ।
सेठ मग्न पूजा में रहकर, घर नहीं गया मोह में बहकर।
पुनः पुनः संदेशा आये, धनंजय कवि को डिगा न पाये।
सेठानी सुत लेकर आयी, रोयी बिलखी और चिल्लाई।
बोली सुत ही मर जाये जब, क्या पूजन कर पाओगे तब।
पूर्ण हुई जब सेठ की पूजा, बोला जिनवर सम नहीं दूजा।
सम्पूर्ण औषधि, वैद्य आप हो, विषधर विष अपहार आप हो।
बेटा यहाँ ना जीवित होगा, बतलाओ फिर किस दर होगा।
तव चरणों है मेरी आस, गन्धोदक पर है विश्वास।
गन्धोदक बालक पर छिड़का, उसने झट आँखों को झपका।
उठ कर बैठ गया वह ऐसे, सो के अभी जगा हो जैसे।
जिनवर की महिमा प्रगटाई, जैन धर्म की शान बढ़ाई।

राजा मेघरथ

राजा मेघरथ बड़े ही ज्ञानी, दान किमिच्छिक देते दानी ।
आहार, अभय, औषधि भी देते, ज्ञान दान भी सबको देते ॥
मध्यलोक में उन सा दयालु, उन जैसा नहीं परम कृपालु ।
देवलोक में चर्चा गाई, पूजनीय उसकी प्रभुताई ॥
देव परीक्षा लेने आये, बाज कबूतर रूप बनाये ।
कबूतर बन जब शरण में आया, मुझे बचाओ यह चिल्लाया ॥
बाज पड़ा है पीछे मेरे, मैं आया चरणों में तेरे ।
तभी बाज बोला यूँ आकर, दो शिकार तुम मुझे कृपा कर ॥
राजा बोला भोजन कर ले, मिष्ट फलों से उदर को भर ले ।
बोला बाज-मैं मर जाऊँगा, उसी कबूतर को खाऊँगा ॥
माँसाहार मैं करता हूँ, फल से पेट नहीं भरता हूँ ।
शरणार्थी मैं दे नहीं सकता, जीव घात मैं कर नहीं सकता ॥
राजा की ये बातें सुनकर, बोला बाज सुनो हे नृपवर ।
कपोत तुल्य ही माँस दीजिये, अपना प्रण फिर निभा लीजिये ॥
रखा कबूतर को तराजू में, अपना माँस रखा बाजू में ।
माँस काट जंघा से रखता, प्राण रक्षा कर-कर न थकता ॥
कबूतर ने फैलायी माया, अपना वजन है बहुत बढ़ाया ।
नृप ने देखी ऐसी माया, निज तन पूर्ण तुला पे चढ़ाया ॥
लखकर ऐसी करुणा नृप की, सिमट गई माया देवों की ।
दोनों असली रूप में आये, राजा की तब पूज रचाये ॥
दया धर्म के फल से राजा, स्वस्थ हुआ पहले सम साजा ।
दया धर्म की महिमा गायी, देवलोक तक धूम मचायी ॥
यही मेघरथ आगे जाकर, बना तीर्थंकर भावना भा कर ।
शांतिनाथ जग में कहलाये, कामदेव चक्री पद पाये ॥

"पद्मरुचि सेठ"

पद्मरुचि इक श्रावक भाई,
नगर सेठ की पदवी पाई ।
पूजा दान पुण्य नित करता,
दु:खी जनों की पीड़ा हरता ॥

इक दिन आया बड़ा सुहाना,
तीरथ जाने को मन ठाना ।
मारग में दो बैल हैं देखे,
आपस में दोनों लड़ते थे ॥

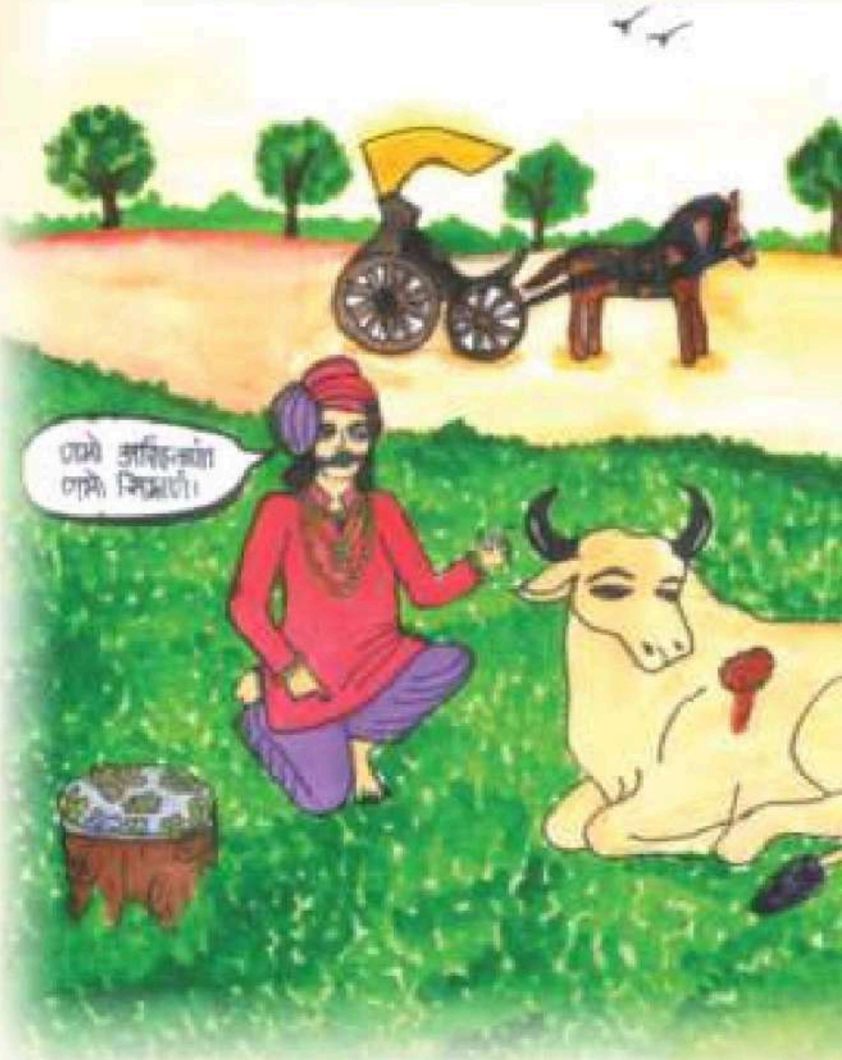

एक मृत्यु की गोद में सोया,
दूजा तड़प तड़प कर रोया ।
मरणासन्न देखकर उसको,
करुणा जागी पद्मरुचि को ॥

णमोकार का मंत्र सुनाया,
अणुव्रतों को भी दिलवाया ।
बैर भाव का त्याग कराकर,
काया छोड़ी शांति पाकर ॥

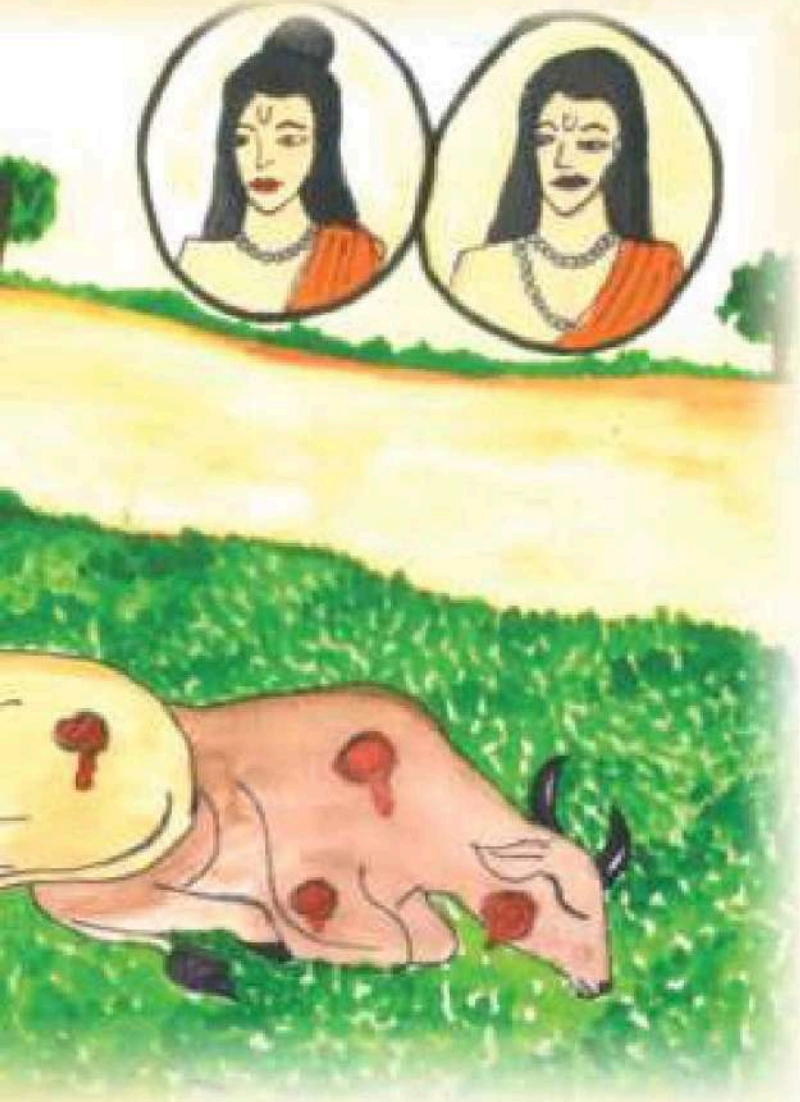

मरकर बैल बना राजा सुत,
पाया नाम वृषभध्वज अति शुभ ।
जाति स्मरण हुआ उसे जब,
सोचा कौन था सेठ वहाँ तब ॥

जिसने मुझे नवकार सुनाया,
पशु से मानव पद दिलवाया ।
पता लगाने उपकारी का,
चित्र बनाया उसी दृश्य का ॥

इक सुन्दर मन्दिर बनवाया,
मंदिर में वह चित्र लगाया ।
इक दिन पद्मरुचि ने सोचा,
प्रभु दर्शन से होता अच्छा ॥

पहुँच गया उस ही मंदिर में,
जहाँ लगा वह चित्र भवन में ।
जैसे ही उस चित्र को देखा,
पूर्व स्मृति की जागी रेखा ॥

दो सैनिक तब उन्हें पकड़कर,
ले गये कुँवर वृषभध्वज के घर ।
वृषभध्वज ने तब सेठ से पूछा,
क्या विशेष उस चित्र में देखा ॥

पद्मरुचि तब बोला आकर,
सुनो तात तुम करुणा पाकर ।
मरणासन्न बैल को इक दिन,
मंत्र दिया मन में रखकर जिन ॥

सुनकर इतना वृषभध्वज का,
पुलकित रोम-रोम था तन का ।
फिर उसने चरणों में गिरकर,
पूर्व वृतान्त कहा हर्षाकर ॥

अहो ! बैल वह मैं ही तो था,
तुमने देखा मुझको रोता ।
तुमसे संबोधन जो पाया,
दुर्गति से मैं बच गया भाया ॥

वही बैल मरकर मैं यहाँ पर,
नहीं तो जाता नरक भूमि पर ।
कृतज्ञता का भाव जगाया,
पद्मरुचि अभिषेक कराया ॥

स्वयं मुनि दीक्षा को पाया,
अपना जीवन सफल बनाया ।
यही सेठ फिर आगे जाकर,
राम बने थे सर्व सुखाकर ॥

बैल बना सुग्रीव भूपति,
वानरवंशी प्रमुख अधिपति ।
महामंत्र की महिमा देखो,
दोनों शिवपथ गामी लेखो ॥

घायल पशु पायेंगे जब भी,
णमोकार गाएंगे हम भी ।
सच्ची श्रद्धा हम भी धरेंगे,
जीवन अपना सफल करेंगे ॥

दु:खियों की न करो उपेक्षा,
उसको भी है तुमसे अपेक्षा ।
महामंत्र हम नित्य जपेंगे,
अपना जीवन सफल करेंगे ॥

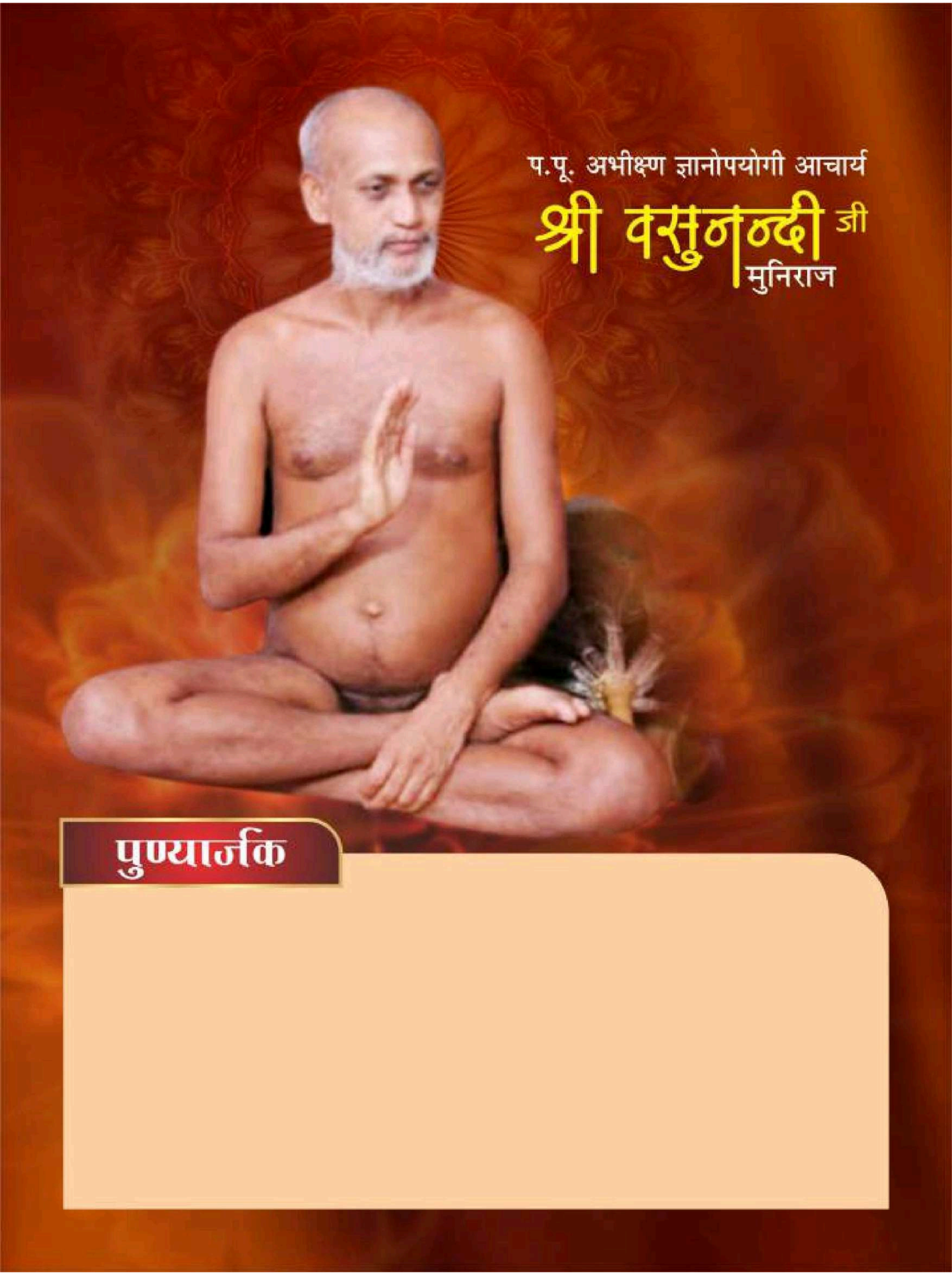
प.पू. अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य
श्री वसुनन्दी जी
मुनिराज
पुण्यार्जक

बच्चों को अगर उपहार ना दिया जाए
तो वह कुछ ही समय तक रोएगा
लेकिन सुसंस्कार न दिए जाएँ तो
वह जीवनभर रोएगा ।